रति प्रिया

श्रीगोपाल आचार्य

प्रकाशक
सूय प्रकाशन मदिर
विस्सों का चौक बीकानर
मुद्रक
विकास आर्ट प्रिंटस
रामनगर शाहदरा दिल्ली ३२
सस्करण प्रथम १६८
आवरण इमरोज
मूल्य बीस रुपये मात्र

RATI PRIYA
A Novel By
Sri Gopal Acharya
~ Rs 20 00

ग्वद् योपिद्धिष्ठान योपिप्राणाधिकप्रिय ।
योपिद् वाहन यापाम्य, योपिद्वन्धो नमास्तुते ॥
तव माव्यादच वाध्यादच, मदव पच भीतिका ।
पचेन्द्रिय धृनाधार, पचवाण नमोस्तुते ॥

—ब्रह्मवर्वत पुराण श्रीकृष्ण जन्मखण्ड अध्याय ३१

प्राक्कथन

रतिप्रिया भारतीय कामशास्त्र से सम्बन्धित एक उपन्यास है। वात्स्यायन के समय का भारत आज का भारत नहीं है। काम संस्कृति भी अपने प्राकृतिक प्रवाह में, समय समय पर समय के साथ परिवर्तित हुई है। वेदों के समय की नारी स्वतंत्र थी। वह सोमरस पीकर गाती थी, नाचती थी और बेसुध होकर नग्न अवस्था, अर्द्ध-नग्न अवस्था में सामाजिक पण्डाल में गिरकर सो भी जाती थी। वात्स्यायन के समय व उसके पूर्वकाल में भी तीसरी शताब्दी के पूर्व व आस-पास पुरुष व नारी के यौन सम्बन्ध संकुचित नहीं हुए थे। समाज में विवाह इतर यौन विद्यमान था क्षम्य था।

महाकवि कालिदास के काल में भी यौन चर्चा को अप्रासंगिक व असामाजिक नहीं समझा जाता था। परन्तु सम्राट हर्ष व बाण के काल तक ववाहिक आदर्श यौन सम्बन्धों पर हावी हो गया। अब तक पौराणिक युग आ चुका था। ब्रह्मवैवर्त पुराण ने नारी की पवित्रता को उसके पातिव्रत्य को उसके गुणों की दृष्टि से, धर्म की दृष्टि से सर्वोपरि माना। उसके अभाव में वह नरक की अधिकारिणी मानी गई।

बारहवीं शताब्दी में कोकोक अथवा कोक ने वण्यदत्त के लिए रतिरहस्य यानि 'कोकशास्त्र' की रचना की। पूर्व के प्रचलित यौन सम्बन्धों पर उसने प्रकाश डाला। समाज में तब तक विवाह का आदर्श प्रतिष्ठित हो चुका था। उन्मुक्त यौन सम्बन्धों को विवर्जित मानते हुए भी कतिपय विकट मानसिक परिस्थितियों में कवि कोक ने अनैतिक माने जाने वाले यौन सम्बन्धों को विवर्जित स्वीकार नहीं किया। पर, साथ ही यह भी सत्य है कि कोक की रचना 'कोकशास्त्र' [illegible]

नही लिखी गयी थी बल्कि, विवाह सूत्र म वधे पति पत्नी के लिए उसका यह कतित्व था।

कवि 'कोक' के बाद भी अनक कवि और लखक काम विषय को लेकर लेखन मे प्रवृत्त हुए। कल्याणमल का प्रसिद्ध ग्र थ अनग रग कोक के रति रहस्य के बाद सम्भवत सत्रहवी शता दी मे लिखा गया। इसके पूव ज्योतिरीश्वर कवि शेखर का 'पच सायक तरहवी सदी के उत्तराद्ध म स्मरदीपिका चौदहवी शताब्दी म जयदेव की रति मजरा पद्रहवी शता दी मे दिनालापनि का 'शुकशप्तति श्रृगार दीपिका और भद्रदव की कदप चूडामणि आदि ग्र था की रचना हो चकी थी। इनके अलावा भी पद्मश्री न नगर सवस्व, व्यास जनादन ने काम प्रवोध महाराज देवराज ने 'रतिरत्न प्रदीपिका और नागाजुन सिद्ध न रतिशास्त्र रत्ना वलि की रचना की।

कहने का तात्पय इससे इतना ही है कि भारतीय वाड मय न काम या यौन को अपने इतिहास म कभी एसा विषय नही माना जिस पर कला और सस्कृति की दष्टि म चर्चा न की जाय बल्कि सामाजिक व वयक्तिक जीवन के समुचित उपभोग व आन द के लिए उसने इस परमावश्यक भी समझा। धम, कला साहित्य मे इसकी प्रवहृति समाज और व्यक्ति के उत्सादन की दष्टि मे की गई है। आय सस्कति म काम जीवन का प्राप्य उद्देश्य स्वीकारा गया है।

प्रस्तुत रतिप्रिया समाज और यक्ति क उत्सादन के लिए ही एक सास्कृतिक और कलात्मक प्रयास है जिसस आदर्शो और नतिकता के मूल्यो मे बधे गृहस्थ भी काम को श्रेय समझत हुए जीवन म उसका आनद ले सकें। आज तक के कामशास्त्रियो के विचारा का सक्षिप्त सार इसम समाविष्ट किये जा ने की चष्टा की गई है।

गजनेर सड़क रोड बीकानेर
१ जून ८०

—श्रीगोपाल आचाय

रतिप्रिया

रतिप्रिया

भय भजना वदना सुन हमारी।
गीता के फूलो की माला बना कर
मैं लाइ हूँ दिल आरती म सजा कर
यह सासो की सरगम करूँ तेर अपण
मैं और क्या दू जो ठहरी भिखारी।
भय भजना वन्दना सुन हमारी।

चित्रपट के किसी गीत की आखिरी ध्वनि के साथ ही तरुणी का मस्तक वदना म जुडे हाथो को स्पश कर गया। कुछ क्षण वह अपन ध्यान म इसी मुद्रा म रही। फिर उसने मूर्ति के सामन घुटन टेक दिय। हाथ फलाने पर पुजारी न उस पर चरणामत और तुलसी रख दी। श्रद्धा स पान करके उसन अपना हाथ अपन सिर पर फेरा। पुन उसन एक बार और हाथ जोडे और वन्दना म सिर झुकाकर वह उठकर सीधी मदिर क बाहर आ गई।

'*क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकता हूँ?* प्रश्न एक अधेड पुरुष का था। तरुणी ने क्षण एक के लिए उसकी ओर देखा। पूछा क्या?

मैं आपके गीत और वाणी स प्रभावित हुआ हूँ।'

तरुणी के होठो पर हल्की-सी स्मिति छा गई। वह कुछ कहना चाहती थी उसके पहले ही उसने सुना 'मैं एक कला प्रेमी शिक्षित पुरुष हूँ देवीजी।

मैं देवी नही हूँ महाशयजी।"

"कुमारी सही।

'आपको धोखा हो रहा है। आप जैसा जो समझते हैं, वह मैं नही हूँ श्रीमानजी'

क्या मतलब ?

मेरा मतलब गहस्थी से है।"

'ओह ! पर उसस क्या ?

परदशी है ?

नही तो।

फिर भय नही है ?

किसका ?

इसी अपने समाज का।'

अपने समाज से मैं सुपरिचित हूँ।

फिर आप मेरे पीछ आ सकते हैं।

और इतना कह वह उसके आगे चल दी। पुरुष पीछे हो लिया। रास्ता कुछ लम्बा ही था। पुरुष ने देखा कि राहगीर उस तरुणी की ओर दृष्टिपात किये विना आगे नही बढ सक्ते थे। यौवन लावण्य सौन्दय उसम कुछ ऐसा था कि आंख न चाहने पर भी उसकी ओर उठ जाती थी। वह सडक की शोभा थी, पथ का सौन्दय थी। पीछे चलते पुरुष ने महसूस किया कि उस रमणी की एक अलग आभा है एक अलग अपना अधिकार है उसकी गरिमा के सामने अपने को तुच्छ पाकर लोग उसके पास पहुचन का साहस नही कर सक्ते थे। उसके आवास के पास पहुँचते ता उसका यह अहसास और भी अधिक मजबूत हो गया। सकीण गली के एक मकान के खुले द्वार पर रुककर उसन पीछा करते हुए पुरुष स कहा—

आइय ! यही इस नाचीज की झापडी है।

अन्दर चलन म आपत्ति तो नहा है ?'

मैं स्वय जो आपसे प्राथना कर रही हूँ।

धन्यवाद।

'पहले आप !

"जसी आज्ञा।'

आवास म प्रवश करने पर पुरुष ने दखा कि एक अधेड औरत घर के आँगन को साफ कर रही है। तरुणी के आने का भान होते ही उसने कहा—

'अरी रति ! आज बहुत देर लगा दी।"

'देर तो नही हुई, माँ।

मैं भी यही कहती हूँ, पर, तेरा वह कामदेव तो किसी प्रकार मानता ही नही है। इस आध-पौन घटे म कम-से कम पचास बार पूछ चुक है कि अब तक क्या नही लौटी ? दशन करते कौन से घटा लगते हैं ? आखें खोला दशन हुए। आखें बन्द की ध्यान हुआ। इनमे कसा विलम्ब ? मैंने कहा अभी तो गई है, अभी आ जाती है। पर धैय किसे ? कहन लगे तुम सामन जाओ। मालिक का मालिक कौन, बेटी ? यदि पाच मिनट और नही आती ता मुझ सामने आना ही पडता। आदमी ता बहुत देखे हैं पर ऐसे आदमी ।"

अब तक वह अपन हाथ के काम म व्यस्त थी परन्तु ज्याही उसने आख उठाई, उसकी दृष्टि नवागन्तुक पर पडी। उसने अपने वस्त्र ठीक किये। बोली आप।'

मेरे साथ आये हैं। मन्दिर से ही। परिचय प्राप्त करन के लिये। अधेड नारी ने आगन्तुक को सिर से पाँव तक एक क्षण म ही देख लिया। उसकी दृष्टि उसके चेहरे पर आरोपित हो गई। उसने सुना, 'मैं एक प्रवासी हूँ। राजस्थान क इस हिस्से म आपकी इस बीकानर नगरी म, आन का पहला ही अवसर है।

आपका स्वागत है। माफ कीजियगा, आपके स्वागत के योग्य तो यह झापडी नही है परन्तु जसे हम नाचीज है उसे दखते हुए आप हमारे *अभावा पर ध्यान नही देंगे।* इतना *विश्वास अवश्य* दिलाती हूँ कि भावना की कोई कमी नहा होगी। रति ! देखती क्या है ? अतिथि दव के योग्य कमरे म आसन तयार कर। बठकर बात कर तब तक मैं चाय तयार करक ल आती हूँ।

कमरा ऊपर की मंजिल मे था। अब रति पडिया पर पहले चढने

लगी। आगन्तुक एक सम्मानपूर्ण दूरी से उसके पीछे हो लिया। क्षणो म ही एक कमर क द्वार पर वे पहुँच गये। कमरे म एक तरुण पहले से ही आसीन था। दो को विशेष कर, आगन्तुक को देखकर वह अपने आसन म उठ बठा। आग्रह क साथ उसने उसे एक विशिष्ट स्थान पर बिठा दिया। आगन्तुक क आसीन होने के बाद उसके मुह से शब्द निकले, आप भी बठिये देवीजी। मैं एक मिनट म हाजिर हुआ। तब तक आप मरी गरहाजिरी का माफ करेंगे।'

'अरे बठिय तो जनाब।

मैंन अज किया कि अभी हाजिर होना हूँ। आप अपना ही घर समझिये और इतना कहने के बाद उसने और इन्तजार नही किया। जस ही वह कमर के बाहर निकला, आगन्तुक के मुह से शब्द निकले वड सुसस्कृत है। एस व्यक्तियो से मिलन म भी मजा आता है। आपकी तारीफ?

"अभी तो इह इसी घर का एक सदस्य ही समझिय।'

"मालिक?

हाँ मालिक ही ह।

आगन्तुक न देखा कि कमर म एक विशिष्ट रुचि की सजावट की हुई है। विशाल खिडकियाँ है, लोहे क चौखटो म शोशे जडे हुए है। कमरे का रग हल्का गुलाबी है। उन पर पर्दे भी मिलत रग के ही हैं। कुछ तस्वीरें लगी हैं जिनम देवी सरस्वती की मुख्य है। कमरे के कोन म एक विशाल पलग है दो व्यक्ति उस पर आसानी से सो सकते है। सफद चादर उसक ऊपर नाच तक लटक रही है। कुछ तकिय भी यथास्थान रखे है। जिस आसन पर वह बठा था वह एक विशाल गद्दा था। उस पर भी स्वच्छ सफद चादर आवरित थी। चार-पाच मसनद भी किनारे सहारे के लिए सजे थ। दूर दूसरे कोने म, एक छोटी मेज थी। उसक सहारे दो आराम कुर्सियाँ रखी थी। उनके ठीक ऊपर खुली अलमारी म कुछ पुस्तकें व्यवस्थित रूप से सजी हुई थी। एक ओर दीवार की खूटिया पर कुछ कपडे टँगे थे। अन्य कोना म व अन्य स्थाना पर नारी की सुन्दर मूर्तिया की सजावट थी। पलग के पास एक मेज

थी जिस पर एक बिजली का लैम्प सजा था। पास ही एक पुस्तक पडी थी। कमरे का फश दरी स ढँका था, परन्तु पलग के सहारे के भाग पर एक कीमती गलीचा विछा हुआ था।

आगन्तुक न अपन क्षणा के दृष्टि-पात म ही कमरे का वातावरण हृदयगम कर लिया। धूपबत्ती का धूम इस वातावरण को सजीव व सुवासित कर रहा था। इतने म ही कमरे म आवाज आइ रतिप्रिये।"

नारी अपने स्थान से उठ खडी हुई। बोली "शाय उन्हें मरी आवश्यकता आ पडी है यदि कुछ क्षण के लिए इजाजत दें तो देख आती हूँ नि क्या बुलाया है?'

अवश्य।' वह चली गयी। आगन्तुक ने महसूस किया कि कमरा उसक अभाव म उसकी अनुपस्थिति म शून्य हो गया है। वह उठ खडा हुआ। पास जाकर वह किताबा की जिल्दा को देखने लगा। एक जिल्द खोलते ही उसकी आखें उस पर से हट गइ। उसके चेहरे पर विकृत रेखाओ की छाया छा गयी। उसने पुस्तक यथास्थान रख दी। दूसरी उठाई तो और भी अधिक निराशा हुई। तीसरी चौथी, पाचवी सातवी, दसवी सभी को वह क्षणा म ही जाँच गया। विकृत रेखाआ ने उसके चहरे को क्षुब्ध और उत्तेजित कर दिया। कुछ क्षण तो वह उन पुस्तका के पास खडा रहा। अपने आसन की ओर उसके पाँव बढे ही नहीं। उसकी दृष्टि सरस्वती के चित्र पर क्षण एक के लिए आरोपित हो गयी। आखिर उसके पाँव बढे परन्तु कमरे के बाहर। जल्दी से पडियाँ उतर कर वह सीधा सडक पर आ गया। अपने विचारा मे खोया हुआ वह लबी सडक पर अकेला बढता चला गया।

बीकानेर रेल्वे स्टेशन स निकल कर कोट दरवाजे की तरफ जान से वीच मे सडक के सहारे नागरी भडार नाम की एक सस्था है जिसमे देवी सरस्वती का एक भव्य मन्दिर है। सफेद सगमरमर से निर्मित एक बहुत ही सुदर मूर्ति इसमे स्थापित है। मन्दिर के साथ सलग्न एक पुस्तकालय भी है परन्तु मुख्य मन्दिर के सामन का विशाल कक्ष वाचनालय के रूप म काम आता है और इसमे सुबह शाम काफी लोग इकट्ठे नजर आते हैं। मा सरस्वती के दशन सब धम और जाति वालो के लिय खुले हैं और उनके अनक तरह के सास्कृतिक समारोह व सभाएँ इस मन्दिर के विशाल कक्ष म प्राय होती रहती हैं। यही वह स्थान था जहा रतिप्रिया से एक कला प्रेमी पुरुष ने परिचय प्राप्त करने की अपनी अभिलाषा व्यक्त की थी। उस दिन से आज एक सप्ताह बीत चुका था। दोनो ही नित्य प्रति यहा आते थे परन्तु उनका दष्टि मिलन इस बीच नही हुआ था।

आज अपन पूव परिचित पुरुष पर रतिप्रिया की दष्टि पडी। वह वाचनालय की एक कुर्सी पर बठा कुछ पढ रहा था। उसे देख वह उसके पास पहुँच गई। कुछ क्षण पास स्थित रहने के बाद पुरुष ने उसकी ओर देखा। सहज स्मिति रमणी के अधरों पर छा गई। अपन स्थान स उठते हुए पुरुष ने पूछा— आप ?

जी।

हुक्म फरमाइये।

हुक्म ता बडे आदमी देत हैं। मैं नाचीज तो प्राथना ही कर सकती हूँ।

फरमाइये।

"आप उस रात घर आते। हम लोगों से कुछ खता हुई ?"

बिलकुल नहीं।

"फिर ?"

मैं जो सोचता था वह बात वहाँ नहीं थी।'

सो तो मैंने आपको पहले ही कह दिया था।"

"मेरा स्वभाव और तबियत जरा अनिश्चित-सी ही है।'

आखिर हम लोग भी तो इन्सान हैं। प्रतिष्ठित और भले आदमी यदि हम गिरे हुओं से इस तरह भागेंगे तो हमारा उत्थान फिर कैसे होगा ? क्या आप चाहते हैं कि गिरे हुए कभी उठें ही नहीं ? अच्छा सम्पर्क ही यदि नहीं हुआ तो उन्हें उठने का अवसर भी फिर कैसे मिलेगा ?"

'आप क्या कहना चाहती हैं ?"

'सब कुछ तो मैं वहीं चल कर कहूँगी। इतना विश्वास अवश्य दिला सकती हूँ कि आपको वहाँ चल कर निराशा नहीं होगी। सत्कार और आतिथ्य का अवसर दिए बिना उठ कर चले जाना आतिथ्यकार का अपमान करना होता है। हम आपकी बराबरी के न सही, पर इन्सान तो हैं ही।"

अच्छा तो मैं आऊँगा।

परन्तु कब ?

'कल, परसों।

कल-परसों न जाने कब आए ? जीवन में आने वाले एक क्षण का भी किसी को कोई पता नहीं। पिछला पूरा सप्ताह मुझे आपको इधर उधर तलाशते बीता है।'

'फिर ?

'अभी क्यों नहीं ?'

आप चलिये मैं आता हूँ।"

'बाद में ?

"हाँ।'

साथ क्यों नहीं ? क्या सामाजिकता बाधक है ?'

नहीं तो।'

फिर ?

मुझे कुछ पढना है ।

मैं इन्तजार कर लती हू ।

मुझ पर विश्वास नही है ।"

अपन भाग्य पर नही है । मुझे इ तजार म आपत्ति नही है ।

फिर आप वठिय । अभी चलते है ।

दूर वठू या यही पास वठ सकती हूँ ?

पुरप न साचा उसक आचरण की परीक्षा हो रही है । बाला—
जहाँ आपका दिल चाहे ।" वह वहा उसक पास वठ गई । कुछ ही
क्षणा म पुरुप उठ वठा । बोला— चलिये ।'

मन्दिर से वाहर वे दोना एक साथ निकले । रास्त म उ होन आपस
म काइ वात नही की ।

अपन मकान के कमरे म आग तुक को आसीन करान के वाद रतिप्रिया
उसके सामन वठ गइ । एक क्षण के विराम के वाद उसने सुना

मैं वठा हूँ । आप आवश्यक काम निपटा लीजिये ।

वादा करें कि फिर उठ कर नही चले जायेंग । उसके होठो पर
मुस्कुराहट थी ।

नही जाऊँगा ।

मैं चाय लेकर आती हूँ ।'

तकल्लुफ की आवश्यकता नहा है ।'

तयार ही है । मैं मन्दिर स आकर पहले चाय पीती हूँ ।

उसके पहल कुछ भी नही लेती ।

जी नहा ।

काई विशप नियम ?

नियम नहीं आदत है । और इतना कह वह नीच चाय लान चली
गई । पुन वापिस लौटन म उस देर न लगी । आई ता देखा कि आगन्तुक
पुरुप पुन उसकी किताबा का टटोल रहा है । मज पर चाय का सामान
रखते हुए उसन कहा—

इसक लिए आप यदि चाहगे तो बहुत समय मिलेगा । पहले चाय

पीकर मुझे खशी मनाने का मौका दीजिए।" पुरुष के आकर बठते ही उसन पहले उसके प्याले को पूरित किया और फिर अपन पात्र को। उसने सुना—

'वे सज्जन आज दिखाइ नही दिये।

'हा।

'क्या ?'

व यहाँ नही है, चले गय।

'कहाँ ?

कुछ कह नही गये।'

क्या ?

'कुछ बताया नही।'

फिर भी ?

क्या आप कुछ बता गय थे ? पुन एक मुस्कराहट उसके होठा पर छा गई।

व और मैं ।

एक जस नहा हैं। यही तो ?

हाँ।

'आप पहले चाय नाश्ता फरमाइये।

यह ता चलती रहेगा।

फिर पहल इस ही चलन दीजिय। दो-तीन घूट पेय के गले से नीचे उतारन के बाद पुरुष पुन बोल उठा—

व ता इस घर क मालिक थ। यही, शायद आपन बताया था ?

जी।'

'फिर भी आपको पता नही ?

यह सही है।

बात समझ म नही आई ?

सब का सारा कुछ समझ म नहीं आता है।

'कोई रहस्य है। बतान म कुछ आपत्ति है ?

न रहस्य है न आपत्ति।

'फिर ?

क्या कीजियेगा जा कर ?

'महज उत्सुक्तावश ।'

इस घर म आने वाला प्रत्येक व्यक्ति इसका मालिक होता है। हमारा भी। मेरी मजबूरी है कि पुरुष की प्रत्येक इच्छा के प्रति मैं समर्पित नही होती। प्रत्येक पुरुष सयमशील भी नही होता। समाज म रह कर स्वार्थ की पूर्ति भी सयम के अभाव म सभव नही है।

फिर मैं भी ।'

अभी नही। आप स्वय नही आये आज तो मैं आपको लाई हूँ। आप अतिथि हैं। मैं आतिथ्यकार मालकिन। कुछ क्षण क विराम के बाद पुरुष ने पूछा—

वे जो उस रोज नीचे थी आपकी मा है ?

यही समझ लीजिये।

मा नही है ?

क्या नहीं ?

'फिर समझ लीजिये का क्या मतलब है ?

'जो समझ लिया जाय वही ठीक होता है।

'मैं वास्तविक सम्बन्ध जानना चाहता हूँ।

'ऐसी क्या दिलचस्पी हो गइ ?

'जब आप मे दिलचस्पी है तो आपके सपर्कों व सबन्धो म भी दिलचस्पी होना स्वाभाविक है।'

वे मेरी मा नही हैं। पर मैं उन्हे मा कहती हूँ। जवान औरत के कोई-न-कोई अभिभावक होना ही चाहिय। अच्छा है पुरुष हो। पर यदि पुरुष न मिल तो फिर कोइ औरत ही ठीक है।

आपके और कोई सबन्धी नहा है ?

अब कोई नही है।

पहले थ ?

बहुत थे।

क्या हुआ उनका ?

सब अच्छे काम आवश म ही किय जाते हैं।

इसीलिय व स्थायी नही हाते क्षणिक होते हैं।

अच्छा काम ता क्षणिक भी बुरा ाही हाता।

अच्छा किया जा आपन मुझसे पूछ लिया। मुझ कुछ राहत मिली। इसके लिय मैं आपकी आभारी हूँ।

वास्तव म मरी इच्छा है कि आपके कुछ काम आऊँ।

इसके लिय मैं आपको धयवाद देती हू। आभार तो मैंन पहले ही प्रकट कर दिया। त्तन म ही नीच स आवाज आइ— रति! उसन उत्तर दिया—

आई मा। फिर अपन स्थान स उठत हुए उसन कहा— अपनी असली चाय तो अब हागी। मा जसी सामग्री दती है वसी मैं नहा कर सकती।

पर चाय ता हो गई।'

वह चाय थाड़ ही थी।

फिर क्या था?

वह ता आपको मशगूल रखन का एक बहाना मात्र था।'

इसीलिय आप इधर उधर की बातें करती रहा।"

आपको व्यस्त रखन के लिए।' और इतना कह वह नीचे आगन म पहुँच ग"। अपनी कथित मा का उचित आवश्यक आदेश दे कर वापिस लौटन म रति को अधिक दरी न लगी। आते ही उसा पूछा— अकेलापन ता महसूस ाही हुआ?

ये क्षण ता बहुत लम्ब हो गये।

कितन?

'दिन महीना वर्षों जितन।

पुरुषा की एक ही भाषा है श्रीमानजी। साथ ही उसके होठा पर एक अथमयी हँसी खेल गइ। पुन अपने पूव आसन पर बठते हुए उसने कहा—

अभा तक आप मुझे गर ही समझते हैं।

'यह कसे?

"आपकी चद्दर अभी तक आपके कंधा पर ही है, जुराब भी आपने उतारे नहीं। शायद आपको मैं अपने प्रति आश्वस्त नहीं कर सकी।"

'ऐसी बात नहीं है।'

'फिर मुझे दीजिये।' और साथ ही उसने उसके शाल को उसके कंधा से अपने हाथों में ले लिया। तरतीब से उसे खूटी पर टाँग कर वह उसके पाँवा की ओर उसके जुराब उतारने के लिए अग्रसर हुई। आगन्तुक पुरुष कुछ सहम गया। उसने कहा—

'मैं स्वयं उतार लेता हूँ।' मगर उसने सुना—

'इसी बहाने एक सज्जन पुरुष का चरण स्पर्श ही हो जायगा।' और साथ ही वह अपने मन्तव्य में सलग्न हो गई। पुरुष बोला—

"रति देवी।"

मेरा नाम रतिप्रिया है। प्रिया कहने में यदि आपत्ति हो तो आप महज रति कह सकते हैं। पुरुष चुप। कुछ क्षण की चुप्पी के बाद उसने मौन भंग करते हुए कहा—

'अपने आपको अब तक मैं बहुत सुसंस्कृत और विद्वान समझता था, परन्तु आज देखता हूँ कि सात्त्विक संलाप की चोटियाँ मेरे लिए भी अभी बहुत ऊँची हैं। रति "

कहिए न रतिप्रिय। प्रिय कहने से ही कोई अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित नहीं हो जायगा।'

यह मैं जानता हूँ।'

'छोटे नाम से तो बहुत ही समीपी सम्बन्धी अपनों को पुकारते हैं। बहुत ही अधिक घनिष्ठता का सूचक होता है यह।'

'वही समझ लीजिये।'

आपकी परिस्थिति भिन्न है। उस घनिष्ठता का अहसास अभी आपने नहीं कराया।'

रतिप्रिया की बात सुन कर पुरुष अभिभूत हो गया। उसके मुँह से बलात् निकला।

'देखता हूँ आपके सामने समर्पण ही सर्वश्रेष्ठ है।'

इतने में ही रतिप्रिया की माँ ताजी सामग्री लेकर उपस्थित हो गई।

मेज पर सामग्री सजाते हुए उसन पुरुष की ओर देखा। बोली—

आप तो उस दिन आये और एस चले गए, जस हमन काई बहुत बडा अपराध आपके प्रति कर दिया हो। क्या सचमुच ऐसी कोई बात थी?

कुछ नही मा। काई आवश्यक काय याद आ गया था।

खर। कोई बात नही। आज तो कोई बिगडन वाला काम नही है न?

जी नही।

फिर आज का खाना यही हमारे साथ खाना है।

फिर यह सब क्या है?'

चाय का पानी खाना थाड ही होता है? नमकीन तो सिफ मुह का स्वाद बदलन क लिए रख दिये है। यह कहते हुए वह नीच चली गई।

रतिप्रिया न पुन पेय से प्याला को पूरित कर दिया। वे दोनो प्रस्तुत सामग्री का आस्वादन करन लग। बीच बीच म वार्तालाप भी चालू था। पुरुष पूछन लगा—

आपन बताया कि आपके सम्बन्धी बगाल म है।

जी।

उनसे कसे बिछुडना हुआ? यहा कसे आइ?

यह बहुत लम्बी कहानी है महाशय जी।

क्या बतान म कोइ आपत्ति है।

बिल्कुल नही।

मैं सुनने का इच्छुक हूँ।

प्याल के पय को गले म उतारने के बाद रति बोली—

क्या आपन उसे सुनने का अधिकार प्राप्त कर लिया है? पुरुष प्रश्न सुनकर आश्चयचकित रह गया। कुछ क्षण उससे बालते न बना। इस प्रश्न के सदभ म उसके मस्तिष्क म उसका यहा आना बठना, सलाप मेज की खाद्य सामग्री सब नई समस्या बन कर उभर आय। मौन स्तब्धता हीनता सबकी मिश्रित छाया उसके चेहर पर स्पष्ट हो गई। कुछ क्षणा की स्तब्ध शान्ति के बाद उसन सुना—

"आपने उत्तर नहा दिया ? आप चुप हैं ?'
"बडा टेढा प्रश्न है देवी जी ।'
आप टेढा ही उत्तर दे दीजिये ।"
शायद हा ।'
शायद, नही भी ?' पुरुष पुन चुप । रतिप्रिया ने पूछा—
क्या ?'
मैं आपका मन्तव्य नही समझा ।'
मैं आपका मन्तव्य समझ गई । आपन एक साधारण प्रश्न को बहुत गहराई स ले लिया । अपने प्रश्न मे मैंने कोई जिम्मेवारी आप पर डालने की चेष्टा नही की थी । न मेरा वह अधिकार है और न आदत ही ।"
'जिम्मेवारी से मुझे कोई भय नही है ।'
ऐसा तो वे भी कहते थे । शायद, सब पुरुष पहले-पहले यही बात कह त है ।'
'परन्तु मैं उस जसा सभी जसा पुरुष नही हूँ ।"
एसा भी सभी पुरुष कहते है ।"
आपका गलत आदमियो से वास्ता पडा है ।"
'यह भी नई बात आपन नही कही । शायद, सब पुरुषो की एक ही भाषा है । एसी भाषा मे, अपने अनुभव के कारण अब मुझे भय होने लगा है । दखती हूँ सब समय सवत्र एक जसे पुरुष एक जसी भाषा ही बोलते हैं । आप उनसे भिन्न कसे हैं, मैं कसे जानूं ?
'क्या कहने म आपका विश्वास होगा ?'
'वही आप बोल देंगे ?'
क्या नही ?
फिर तो वह आपकी बात नही हुई ।"
मैं उसे वचन के रूप म कहूँगा ।'
'पर वह होगा वाचन ही । वचन तो व्यक्ति के हृदय स कहे जाते हैं । मुहं म कौर और गले म पय के घूट के साथ दोनो की वार्ता अग्रसर होती गइ । पुरुष नारी की सबल शक्ति के आगे चुप था । रतिप्रिया कुछ क्षणो के मौन के बाद बोली—

आप बहुत कृपण मालूम होते हैं। इतना कुछ लेने के बाद भी आपने कुछ दिया नहीं। इससे मैं क्या समझूं?

क्या मतलब? विस्मय और हीनता प्रश्न सुनते ही उसके चेहरे पर आ गई। मगर उसी क्षण उसने सुना—

मेरा मतलब परिचय से है। मेरे विषय में बहुत कुछ जान कर भी आपने अपने विषय में अभी तक कुछ भी नहीं बताया। ऐसी कृपणता भी किस काम की?

मेरा नाम अजय है।

'बहुत अच्छा नाम है।

'मूल में उत्तर प्रदेश का निवासी हूँ। पर रहा वहां बहुत कम हूँ। बंगाल बिहार राजस्थान गुजरात महाराष्ट्र सभी में मैंने प्रवास किया है। अपने भ्रमण में मैंने बहुत कुछ सीखा है। एम० ए० तक शिक्षा प्राप्त की है। चित्र मूर्ति संगीत साहित्य का अध्ययन और साधना की है। किसी भी ज्ञेय विषय से मुझे अरुचि नहीं है। बल्कि चाहता हूँ कि प्रत्येक में दक्षता प्राप्त करूँ। अब आव्रजक हूँ।

'और पहले क्या थे?

गृहस्थी था। भाग्य ने वह सुख छीन लिया।

और उस सुख की खोज में अब आव्रजक हैं?"

यही बात है।"

'अपने आव्रजन में आपको शान्ति मिली?

"नहीं। उसकी तलाश में हूँ।'

अपने से बाहर कहीं शान्ति है अजय बाबू?'

भीतर शान्ति नहीं थी इसीलिए तो बाहर खोजने निकला।

'बाहर कहीं मिले तो मेरा भी उससे साक्षात्कार कराना।'

निश्चय ही देवीजी।

कुछ आशा बँधी है?

क्यों नहीं?

कहाँ?"

'यहाँ। इसी घर में आप में।'

'फिर वही पुरुषो वाली पुरानी वात ।"

मैं झूठ नही कहता ।"

मैं इस सत्य से तग आई हुई हूँ ।'

क्या आपन मानव म उसकी मानवीयता मे, विश्वास खो दिया है ? आपकी उसम आस्था नही है ?'

चाहती हूँ कि आस्था हो । परतु " आगे शब्द उसके मुह से निकले नही ।

परन्तु क्या ?' रतिप्रिया न प्रश्न सुन लिया था । अपने मुह के कौर का गले से नीचे उतारने के बाद वह बोली—'अनुभव उस आस्था का टिकने नही देता ।' कुछ क्षण की चुप्पी के बाद उसन प्रश्न किया—

अजय बाबू ! आपको यहाँ शान्ति मिली, उसका कारण क्या है ?'

'साम्यता ।'

किसस ।'

'अपनी प्रिया स ?" रतिप्रिया अवाक्-सी उसकी ओर देखने लगी । उसन सुना—

निश्चय ही उसम और आप म कुछ अन्तर नही समझ पा रहा ।"

'वही ता नहा हूँ ?' पुन एक स्मिति की छटा खिल गई ।

'नहीं । उसका दाह-सस्कार ता मैंन अपन हाथ से किया है ।"

'ओह !'

'सवप्रथम आपके मधुर स्वर न मुझे आकर्षित किया । फिर देखा तो एकाएक अपन पर विश्वास नहा हुआ । स्वप्न है या सत्य ? वह यहाँ कग आ गइ ? अपन को बार-बार कइ जगह से स्पश करके बार-बार अपन मस्तिष्क म स्वय से प्रश्न करके आखिर आश्वस्त हुआ कि स्वप्न तो नहा है । जीवन म इतनी अधिक साम्यता दुलभ है । फिर स्वाथ वश असभव को सभव समझने लगा । असत्य को सत्य समझन की इच्छा जागृत हुई । रहस्य भी ता काई चीज हाती है । साचा शायद यह भी एक रहस्य है । बलवती भावना इच्छा शायद एक भूत का पच भूत म परिवर्तित कर दती है । शायद वही रहस्य मूर्तिमान हुआ है । यही साच मैं आपकी आर आपके परिचय के लिए अग्रसर हुआ । आपकी

उन्होंने ता न मुझ और भी मेरे विश्वास म आश्वस्त कर लिया। मगर यहाँ आने के बाद मैंने आपके पुस्तकालय की पुस्तकें देखा तो मेरे मस्तिष्क ने मर हृदय न मुझसे कहा, अजय ! यह वह नहीं है। वह यह नहीं हो सकती। वह धोखा है और फिर मुझे किसी अनदेखी प्रेरणा न उसको आवाज दी इस स्थान को छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। सब म यह आज का दिन है। सोचता हूँ कि मैं गलत था। मेरा यहाँ से जाना मेरी भूल था वही भूल। बहुत बड़ी भूल। आज एक प्रेरणा फिर कहती है कि शायद वह यही है। जलाकर जलाकर भस्म कर देने की बात ही गलत है। शायद उसका अस्तित्व समाप्त नहीं होता। परिवर्तित रूप म पुनः प्रतिस्थापित हो जाता है। भूत प्रेत देवी देवता रहस्यमय जीवन की सत्य घटनाएँ हैं। और रहस्य है ही क्या ? वही तो जो समझ म न आये। आज भी इस स्थिति का आपके अस्तित्व को मैं समझने म असमर्थ हूँ।

वह मैं नहीं हूँ।

यह ठीक है परन्तु आज मैं इस सत्य को अस्वीकारना चाहता हूँ। जिस असत्य से इन्सान की रक्षा होती है जिस झूठ से उसे नया जीवन मिलता है वह असत्य वह झूठ सत्य से कहीं अधिक अच्छा होता है। इन दिनों के जीवन म क्या झूठ क्या सत्य ? जिससे जीवन का सफर साध्य हो वही सत्य है। जीवन के लिए सबल चाहिए। जैसा जो मिले वही ठीक है।

'जिसे सबल चाहिए वह स्वयं सबल नहीं हो सकती।

'आपको सबल चाहिए रति देवी ?

क्या नहीं ?

कैसा सबल ?

सबल के भी क्या प्रकार है ?

क्या नहीं ?

''जैसे ?'

सपत्ति धन।'

'आवश्यक वह मेरे पास है।'

"पुरुष ।
पुरुष चाहिए परन्तु पति नहीं । साथी चाहिए स्वामी नहीं ।
और उस पुरुष से अपेक्षा क्या है ?
सह-जीवन, आत्मा प्रदान पर भार नहीं । समर्पण नहीं विनिमय ।
क्या वह पुरुष मेरे जैसा हो सकता है ?
क्या आपको अपने पर विश्वास है ?
किस रूप में ?
पुरुष रूप में ।'
क्या नहीं ?
फिर मैं सोचूंगी । और इतना कह वह पुनः स्थालिका में रखी खाद्य-सामग्री को चबाने लगी । प्याली के पेय का मुंह से स्पर्श करते ही उसने कहा चाय ठंडी हो गई है अजय बाबू । उसे रिक्त पात्र में डाल दीजिये । लाइये मुझे दीजिये । मैं दूसरी प्याली बना देती हूँ । और यह कहते हुए उसने अजय के हाथ की प्याली को अपने हाथ में ले लिया । उसे रिक्त करके पुनः गरम चाय से पूरित करते हुए वह बोली—

अजय बाबू ! रतिप्रिया एक स्वतंत्र विचारों की औरत है । वह भी एक साधारण नारी ही होती, परन्तु भाग्य को यह स्वीकार नहीं था । माँ-बाप के मरने के बाद अन्य सम्बन्धी उससे और उसकी बड़ी बहिन से छुटकारा पाना चाहते थे । इसमें उनके निजी स्वार्थ थे । आज हम दोनों बहिनों को बिछुड़े अरसा बीत गया । सात-आठ वर्षों से उसका कोई पता नहीं है । मेरे विषय में भी शायद उसको कोई खबर नहीं होगी । अब अगर कहीं मिल भी जाय तो एक-दूसरे को हम नहीं पहचानेंगी । खैर, हर एक की किस्मत अपने साथ है । जो बीत गया वह वापस नहीं आ सकता । भविष्य वह तो अभी गर्भ में है पता ही नहीं हुआ । क्या हो जाता हो कुछ भी नहीं कहा जा सकता । दोनों को समस्या बनाकर वर्तमान को नहीं बिगाड़ना चाहिए । जो जैसे जितना चल ठीक है । समय गुजरता ही है । इसी तरह स्त्रियों के साथ उम्र बीतनी है । पुरुष के लिए जैसे सभी बाधाओं के बावजूद उसकी शक्ति उसका बल उसका सबल होता है उसी तरह जीवन में नारी के लिये

सब अभावा क हाते हुए भी उसका रूप, उसका नारीत्व उसके सफर म उसका पाथय वन जाता है। अभिभावका की अनुपस्थिति म ही य सब सबल उसके काम आत है। अभिभावका के रूप म मैंन उनका उप योग मात्र सीख ही नही लिया, वल्कि साध्य कर लिया है। इसीलिए *आज आश्रय की आवश्यकता नही। अपना आश्रय स्वय ही हूँ।'*

आपकी ये माताजी ?

सहायक हैं।

आन जाने वाले पुरुप ?

साथी है।

आश्रय नहा ?

नहा ?

आपन ही तो उस दिन कहा था कि वे मालिक है।

वह भापा का सौजन्य था। फरेव कह दीजिये।

आप फरेब करती हैं ?

मर लिए वह सौजन्य सस्कृति का अग है। सास्कृतिक भापा न समझने वाला के लिए वह एक धाखा और फरेब की बात हो सकती है। पर उसम गलती मेरी नही है। वस्तुपरक दृष्टि न रखन के कारण पुरुषा को प्राय यह धोखा हो जाता है। जो जसा है उस वसा ही देखन-सम झन से इन्सान गलती नही खाता।

इसी समय घडी न नौ वजाए। रतिप्रिया उठ खडी हुई। वाली—

मेरे अभ्यास का समय हो गया है। पूरा एक घटा मुझे लगेगा।

कहीं जायेंगी ?

विलकुल नही ! नीचे कमरा है। वही मेरा अभ्यास मच है। आप यहाँ आराम से बठिय। आप विद्वान है। मैं आपको मरे से अधिक सुसस्कृत और योग्य ऋषियो का सग-लाभ करा कर जाऊगी। और इतना कह कर वह अपनी पुस्तका के सग्रह की ओर अग्रसर हुई और उनम से दो तीन पुस्तकें उसक आग रखकर वाली आप स अभी घटे भर का अवकाश ? ठीक है न ? माफी चाहती हूँ। श दा के साथ ही वह नीचे चली गई।

अजय पुस्तका क अध्ययन म लीन हो गया। कभी-कभी उसका ध्यान नीच से आते हुए स्वरा और बोला की ओर अवश्य चला जाता। रतिप्रिया को वापस लौटन म घटे भर से कुछ अधिक ही लगा। मगर जो पुस्तकें वह जाते हुए उसक सामन रख गई थी उन्हाने उस व्यस्त रखा। लौटी तो उसके चेहरे पर मुस्कराहट थी। कमरे म प्रवेश करत ही अजय ने पूछा—

अभ्यास हो गया ?

हाँ। आप अकेले म अयमनस्क तो नही हुए ?

नही। आप जो प्रबध कर गइ वह सराहनीय था।

पुस्तकें कसी लगी ?

बहुत अच्छी हैं परन्तु य सब आपको कहाँ स मिली ?

'बाजार म सब कुछ मिलता है।

आखिर किसी न तो इनका नाम-पता भी दिया हागा।

प्रकाशका और विक्रेताआ के सूची-पत्ता म सारी सूचनाएँ उपलब्ध हा जाती हैं।

आप उन्ह मँगाती हैं ?

नही तो।

'फिर ?

'पुस्तकालया म नियमित रूप से वे मिल जाते हैं। मैं जहाँ भी निवास करती हूँ नियमपूर्वक पुस्तकालय पहुँच कर पढती हूँ। पुस्तकालय पत्रक प्राप्त करन के बाद वहाँ की पुस्तकें प्राप्त करन म कोई कठिनाई नही होती। जहाँ अच्छ पुस्तकालयाध्यक्ष होते हैं वहाँ किसी विषय की पुस्तकें चयन करन म आपको असुविधा नहा होगी। **प्रत्येक पुस्तकालय**

म अपना सूची पत्र रखन की प्रथा है। अपन इच्छित विषय का स्वय भी उसस अवलोकन किया जा सकता है।

यहाँ अच्छा पुस्तकालय है ?

क्या नही।

ये पुस्तकें ?

य ता मेरी अपनी है। जो पुस्तकें मुझ पसन्द आ जाती हैं उन्हे मैं खरीद लेती हूँ।

'ये सब खरीदी हुई है।"

सब नही कुछ उपहार ह।

आपन इन सबको पढा है ?'

क्या नही ? इनका और उपयोग ही क्या है ? दिखावे क लिए पुस्तका का भडार रखा की न तो मेरी आन्त है और न क्षमता ही। बहुत से लोग एसा करत है परन्तु वह धन का दुरुपयाग व प्रदशन मात्र है।

कामशास्त्र की इतनी पुस्तकें ?

बुरा है यही ता ? विशेष कर मरे यहाँ। क्या ?

आश्चय ह।

एक बात पूछू ?

अवश्य।

शास्त्र बुरा है ?'

नही।

ज्ञान बुरा है ?

नही ता।

फिर कामशास्त्र क्या हय है ?

हय नही। सभ्य समाज असामाजिकता से इसे सबद्ध करता है।

उत्तर सुनकर रतिप्रिया का हसी आ गई। अजय उसकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा म उसके सुन्दर चहरे की ओर एकटक ताकता रहा। कुछ क्षण की अथ भरी दृष्टि के बाद उसके मुह स शब्द निकले—

अजय बाबू ! पुरुष के लिए नारी काम का आगार है। उसका

अग प्रत्यग काममय है काम की धारा से सिंचित है। यौवन का भान होते ही काम की किरणें स्वत उसके शरीर से प्रस्फुटित हो हाकर उसके चारो ओर के वातावरण म फलती रहती हैं। यह प्राकृतिक है अपन आपके एस समय म वह पुरुषा का उसके ध्यान का केन्द्र-स्थल, केन्द्र बिंदु बन जाती है। पुरुषा के लिए भी अपनी एक अवस्था म नारी के प्रति आकर्षित हाना प्राकृतिक है स्वाभाविक है। नारी की इन किरणा के पुरुष सवत्र सब समय प्रणय स्थल हैं। प्रकृति के इस नियम से नारी और पुरुष किसी का कोई छुटकारा नही। शशव के प्रारम्भ स मरण की आखिरी अवस्था तक सब प्राणिया की यह प्रेरक शक्ति है जो इसे जानती है वह ज्ञानी है। जो इसे नहा जानता इस जानने की कोशिश नही करता इसके ज्ञान के प्रसार म बाधक हाता है, वह न ज्ञानवान है न सामाजिक ही। कुठाग्रसित एसे सुधारका से किसी समाज को कोई लाभ नहा पहुच सकता।

मालूम हाता है कि आपकी इस काम म बहुत अधिक अभिरुचि है।

काम म नहा कामशास्त्र म।'

मैं क्षमा चाहता हूँ कि उपयुक्त भाषा का मैं प्रयोग नही कर सका।

'कोई बात नहीं।

किसी विषय म अभिरुचि रखना मैं बुरा नहा मानती। क्या भारत के आय ऋषि अविवकी और असामाजिक थ जिन्होंने काम जसे विषय का शास्त्र की सज्ञा दी? फिर समझ म नहा आता कि आजकल के सुधारक इस विषय के ज्ञान की चर्चा तक क्या नहा करत। किसी वस्तु को किसी विषय को रहस्यमय बना दन स उसका अस्तित्व नही मिट जाता बल्कि उल्टे उस विषय म लोग गलत धारणाएँ तरह-तरह की गलतफहमियाँ अपन मस्तिष्क म पालन लगत हैं। प्राकृतिक नियम स विरोध क्या? जीवन की प्राकृतिक घटना के प्रति उदासीनता बेरुखी किस बात की? मस्तिष्क की क्रिया के मूल म जो सत्य स्थापित हो क्या उससे छुटकारा पाया जा सकता है? क्या उसके ज्ञान के अभाव म

इन्सान इन्सान को भलीभांति समझ सकता है ? क्या जीवन म एक-दूसरे को समझना असामाजिक है ?"

'तर्क तो ठीक है।

"ठीक और बे-ठीक का फिर आधार क्या है ? आदि शकराचार्य और मण्डन मिश्र की कहानी तो आपन सुनी ही होगी। वह कथन ही सही सत्य न सही पर इतना सत्य तो उससे झलकता ही है कि उस युग म स्त्री-पुरुष धार्मिक शास्त्राथ के स्तर पर काम की चर्चा करने म समाज के धार्मिक मच पर भी स्वतत्र थे। और आज ? अध्यात्म स दूर भौतिक सस्कृति का प्राणी काम भोग सभोग आदि शब्दो को अपने घर म और अपने समाज म अपनो म चर्चा करन स घबराता है। जसे ये शब्द काम का यह विषय किसी निम्न हीन सभ्यता की दन हो।

बात तो ठीक है परन्तु

परन्तु क्या ?

आज का गहस्थ इसे स्वीकारता नही है।

गन्दगी पर पर्दा डालन से क्या कभी गन्दगी मिटी है अजय बाबू ?

फिर यह गन्दगी है न ?

है नही हमने-आपने इसे बना रखा है अजय बाबू। हवा पानी भोजन की तरह ही काम भी हर जीव की आवश्यकता है। इसे भी शुद्ध रूप म प्राप्त किये बिना वह स्वस्थ नही बन सकता। भारतीय ऋषियो ने काम की महत्ता को कभी कम नही समझा। पाश्चात्य विद्वानो ने भी अब इसकी परिपुष्टि कर दी है कि मानव जीवन के सचरण म उसकी अभिव्यक्तियो म उसकी विकृतियो म इस काम का एक बहुत बडा हाथ है। उनका तो यहाँ तक कहना है कि जन्म से मत्यु तक काम की प्रवत्ति मानव का पिण्ड नही छोडती। इस स्वाभाविक प्रवृत्ति स दूर रहना दूर रखना जीवन मे अपूर्णता का आमन्त्रण देता है। इसीलिए जीवन के स्वभाव से जो आवश्यक है उसके तिरस्कार के पक्ष म मैं नही हूँ। वह तिरस्कृत है भी नही।

यह सब आप पठन स कहती है या अहसास से अनुभव स ?

दोनो स। आपन मेरी आलोक पुस्तिका अभी नही देखी। उसम

मेरे विस्तत पठन व सकडा समक्षकारा का विवरण है। एक अच्छा-खासा भाषण उससे तयार किया जा सकता है।"

'आप भाषण देंगी ?

'नही मुझे भाषणा म विश्वास नही है।

फिर आलाक पुस्तिका का प्रयोजन ?

'वह मेरे अपन उपायोग के लिए है। अनक गहस्थियो के जीवन को मैंने परिश्रम से प्रकाशित किया है। मेरा ज्ञान, मेरा पठन अयहीन नहीं है। मैंन कामशास्त्र से शिक्षा ली है दी है और दती हूँ। यह चरित्रहीन आवाराआ की कहानी नहीं है अजय बाबू। सयत सुखी जीवन का यह एक सूत्र है याग है सविन्यास है।

रतिप्रिया के कथन को सुनकर अजय हतबुद्धि रह गया। वह उसे अब तक एक सुदर असहाय रमणी समझता रहा था, पर ज्या-ज्या उसकी वाता उससे अग्रसर हाती गयी उसम उसे अनक नए आयाम दष्टिगाचर हुए। साथ साथ उसकी दिलचस्पी भी उसम बढती गयी। साचकर वह कुछ कहना चाहता था, उसके पहले ही कमरे के द्वार पर हल्का सा अभिहनन हुआ।

"कौन ?

'यह तो मैं हूँ। साथ ही उसकी मा अदर आ गई। रतिप्रिया ने पूछा—

'मोटर आ गई ?

हाँ।'

'फिर जल्दी करो माँ। मेरे और ड्राइवर के लिए दो कप चाय बना दो। अजय बाबू को खाना दे देना। ये आराम करके उठग उसक पहल मैं आ जाऊँगी। क्या ठीक है न ?

मेरे लिए खाना ?

क्या हज है ?

'आप ता जा रही है।

इससे क्या ? आप इस अपना ही घर समझिय।

'सो तो ठीक है पर '

मैं जानती हूँ कि आपका यहा अपना कोइ घर नही है, जो कही कोई इन्तजार करता होगा। मह बात दूसरी है कि यदि आपको यहाँ ठहरना नागवार गुजरता हो। उस सूरत म मैं आपको विवश नही करना चाहूगी। मरा लौटना करीब दो घटे म होगा। अच्छा अभी इजाजत चाहती हूँ।

और इतना कह वह नीच क तल्ल म चली गयी। उसक जान क बाद कुछ देर तक अजय अकेला बठा कभी कुछ अपनी स्थिति सोचता और कभी रतिप्रिया का। अपन अब तक के जीवन म उस एसी नारी स वास्ता नही पडा था न ऐसी स्थिति-परिस्थिति से ही। व्यवहार म इतनी शीघ्र आत्मीयता उसन उत्पन्न होत अब तक नही देखी थी। इस नारी से अपन भावी सम्बन्ध क विषय म वह अभी अनिश्चित व अनिर्णित था। बहुत देर तक वह कमर की छत पर टकटकी लगाए बिस्तर पर पडा रहा। एक बार यह भी उसक दिमाग म आया कि उसकी तथाकथित मा से ही कुछ बात कर परन्तु फिर उसकी भी व्यस्तता को देखकर उस अपना वह विचार छोड देना पडा। वह उठकर पुस्तको की ओर चला गया। उसन दखा कि हिन्दी अग्रेजी बगला भाषा की अनक विषयो की पुस्तकें उसके इस छोटे से पुस्तकालय म मौजूद है। कथा साहित्य की विपुलता होते हुए भी उसन महसूस किया कि अन्य सत्साहित्य की उसम कमी नही है। अनेक शोध-ग्रन्थ भी उसन देखे। भारतीय कला सस्कृति धर्म-सम्बन्धी कुछ ग्रन्थ यहा उसकी दृष्टि म आये। जिस अपनी आलोक पुस्तिका का रतिप्रिया न आज उसम जिक्र किया था वह तो उसे वहा नही मिली परन्तु उसने दखा कि पसिल स उभारी हुई नारी और पुरुष की अनक आकृतियो की सग्राहिका वहाँ अवश्य मौजूद हैं। उस निश्चय करते अधिक देर नही लगी कि रतिप्रिया काफी अध्ययनशील, बुद्धिमान और क्रियाशील औरत है। जिस साथ हुए स्वर सौन्दर्य और सलाप न उस आकर्षित किया था उसक पाछ उसे सयम सस्कृति और सुसस्कारो की एक पृष्ठभूमि दृष्टिगोचर हुई। इन सबके सम्मिलित सदर्भ म उसन अपन गत जीवन की ज्ञानोपार्जन-सम्बन्धी घटनाओ और परिस्थितियो का अपन मस्तिष्क म विवेचन किया। अनेक पुस्तकें उसने पढी थी। अनक सास्कृतिक

सम्मेलनों में वह शामिल हुआ था। अनेक कलाकारों का उसे परिचय प्राप्त था। संगीत-आयोजन किये थे, नृत्य देखे थे, चित्र प्रदर्शनियाँ देखी थीं। अनेक नेताओं और विद्वानों के भाषण सुने थे परन्तु क्षण भर में ही उसके मस्तिष्क में एक प्रश्न उठा कि क्या उसने जो कुछ पढ़ा, सुना, देखा उस पर उसने कभी मनन भी किया या नहीं। यदि नहीं तो क्या वह सब जीवन की इस मंजिल पर निरर्थक नहीं हो गया है। घटनाओं की स्मृति आज भी उसके मस्तिष्क में सुरक्षित थी परन्तु उनका सम्बन्ध किसी कलात्मक सिद्धान्त को लेकर हृदय और मस्तिष्क से न था, बल्कि मात्र मन से था एकमात्र इच्छाओं से वासनाओं से था। उसने महसूस किया कि अपनी इच्छाओं की अनुकूलता के कारण उनकी कुछ अंशों में तुष्टि के कारण ही अब तक वह अपने-आपको सुसंस्कृत, कला-प्रेमी, विद्वान और भी न जाने क्या-क्या समझता आ रहा है। उसे अहसास हुआ कि कला, ज्ञान, संस्कृति सब जब तक इंसान के हृदय में स्थापित होकर अपने स्वयं के जीवन में अपने समाज के जीवन में प्रसारित न हों, अंकुरित, पल्लवित व पुष्पित न हों, तब तक जीवन के अस्तित्व का बोध, उसका उद्देश्य, उसका अभिप्राय वह नहीं जान सकता। अपने गहन किन्तु क्षणिक विचारों की इस शृंखला में रतिप्रिया का आकर्षण व्यक्तित्व, उसकी सौन्दयमयी प्रतिभा प्रच्छन्न रूप से प्रतिक्षण उसके समक्ष रही। ऐसी मानसिक स्थिति में कमरे के कपाट पर उसने अभिहनन सुना। बोला, 'आइये।' रतिप्रिया की माँ उपस्थित हुई। पूछा—

'खाना ले आऊँ बाबूजी?'

'ले आइये।' वह वापिस लौट गई।

उधर रतिप्रिया के चारो ओर युवतियो का समूह उसे घेर हुए बठा था। कमरे की सजावट व उपस्थित वन्द की पोशाको से यह सहज ही मे अनुमान लगाया जा सकता था कि वह किसी सम्पन्न परिवार के आवास का एक कक्ष है। सगीत का साज सामान इस कमरे म अभी खुला और बिखरा हुआ था जिससे यह भान होता था कि कुछ दर पहले तक उसका अभ्यास यहा चालू था। इस समय रतिप्रिया से अनक तरह के प्रश्न पूछ जा रहे थे और वह उनका उत्तर दे रही थी। एक कह रही थी—

वहिन जी ! पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये।'

पूछो भी।'

वस्त्र कस पहनने चाहिय ? दूसरी बोली—

यह भी कोई बात है ? जस मन को अच्छ लगे। दूसरी बाल पडी—

मैं आपसे उत्तर नही चाहती। बहिनजी स प्रश्न है।'

मैंने तो सुना है कि खाना अपनी पसन्द का और कपडे किसी और की पसन्द क। कथन तीसरी का था। मगर सबन सुना 'और किसी के कोई और नही हो ता ? बोलन वाली यह कोइ और ही थी—

बहिनजी ! यह हर बात को मजाक म उडा देता है।

परस्पर म तो मजाक हा हाता है। इनका कोई रहस्य हा तो आप भी ताना कस दा। खर। आप सब एक ऐसी अवस्था म पहुँच गयी हो जब सारे पुरुष आपको आर दखेंगे। न चाहत हुए भी उनकी दृष्टि आपकी ओर उठ जायगी। यह आकषण प्राकृतिक है। अपनी इस उम्र म आप भी औरा की ओर अपनी दृष्टि उठायेंगी। सलज्जा आपकी नजर

स्वत झुक जायगी। यह भी प्राकृतिक है। युवक हो या युवती। किसी को किसी न, किसी समय यह सिखाया तो नहीं कि एक-दूसरे को देखकर इस प्रकार अपनी दृष्टि उठायें या झुकायें। मैं तो कहती हूं, यह सब प्रकृति में सर्वत्र देखने को मिलता है कलि के प्रस्फुटित होते-होते अनेक तरह के जीव तितलियां भौंरे मानव तक क्या उसके इर्द गिर्द मडराने लगते हैं? पूर्ण विकसित होने पर वही कलि एक सुन्दर सौरभमय पुष्प का रूप ले लेती है। पृथ्वी हवा पानी धूप आकाश प्रकृति के जीव सभी प्रकृतत उसके विकास में योग देते हैं। एक सहृदय व्यक्ति एक समझदार माली उस सुन्दर पुष्प को तोडता नहीं। जो उसकी सार्थकता को जानता है, वह उसे उसी के स्थान पर मुरझा जाने की स्वतन्त्रता देता है। वहीं अपने वातावरण में अपने प्राकृतिक समाज में। वही कलि वृद्धिगत सुरभित व विलसित होती है। एक दिन आता है, जब पूर्ण मुरझा जाने के बाद अपने गर्भ में अपने ही जैसी अनेक संभावनाओं को लिए हुए बीजों को लिए हुए हवा के एक झोंके के साथ जमीन पर झड जाती है। समझदार माली ऐसे आखिरी समय में पृथ्वी के अन्य स्थलों को सज्जित व सुरभित करने के लिए उसे उठाकर सुरक्षित रख लेता है। यदि किसी समझदार माली के वह हाथ नहीं पडती तो प्रकृति ही अपने एक नियम से उसे उसके बीजों को हवा के झोंकों से इधर-उधर बिखेरकर धूल से आवरित कर देती है। इस तरह बीज पुनः अंकुरित होने की प्रतीक्षा करते हैं और उस एक दिन की कलि का बाकी हिस्सा खाद बनकर अपने समाज की उसी भूमि को उपजाऊ बनाता है। सर्दी गर्मी पतझड, वर्षा वसन्त सब उन बीजों के पुनः अंकुरित, पल्लवित पुष्पित, विलसित सुफलित होने में सहायक होते हैं और एक दिन उस कलि का अपना संसार—एक संसार बस जाता है जो हमारे संसार को सुन्दर बनाता है सुरभित करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि कलि के निरंतर परिवर्तन निरंतर वृद्धि का यह प्राकृतिक नियम समस्त प्रकृति में सर्वत्र शाश्वत है। मानव इस नियम से स्वतन्त्र नहीं। तुम स्वतन्त्र नहीं, मैं स्वतन्त्र नहीं हमारे बुजुर्ग स्वतन्त्र नहीं, हमारे साथी स्वतन्त्र नहीं। न हमारी सन्तान ही इससे मुक्त होने का दावा कर सकेगी। अब पर ...

तुम्हार सीधे प्रश्न पर लौटती हूँ। प्रश्न किसका था ?

"मेरा वहिन जी।'

कलि का खिलना प्रस्फुटित हाना स्वभाविक है न ?

जी।

जब तक वह म्वस्थ और सुदर नही दिखाई देगी क्या तब तक उसक विकसित और सुरभित होन के अवसर उत्पन्न हाग ?

'नही।'

इसका मतलब हुआ कि सुन्दर दिखाई देने की लालसा स्वाभाविक है, प्रकृति दत्त है।'

"जी।'

अब प्रश्न उठता है कि सुदर किस प्रकार बना जाय ? क्या ?

'जी।

सौदय की प्रथम शत है स्वास्थ्य। अच्छा स्वास्थ्य। स्वण हीरे-जवाहिरात कीमती वस्त्र पहनने से क्या स्वास्थ्य बनता है ? गन्दे अगो पर क्या कीमती वस्त्र आभूपण शोभा देत है ? उत्तर नही-नही। दूसरा प्रश्न है अच्छ स्वास्थ्य की शत क्या है ? शुद्ध हवा। शुद्ध पानी शुद्ध जमीन, शुद्ध धूप, शुद्ध आकाश और श्रम। सब स्वच्छ। स्वच्छ शरीर, स्वच्छ वस्त्र, स्वच्छ खाना और इन सबके साथ स्वच्छ विचार स्वच्छ हृदय, स्वच्छ मन। उसकी स्वच्छ इच्छाएँ और यह सब इसलिए कि मानव प्रकृति का आज तक सर्वोत्तम विकसित प्राणी है। मवरूप से स्वस्थ वातावरण उसके सब स्वास्थ्य के लिए एक आवश्यक शत है। तभी वह अपन सब विकास की आर अग्रसर हो सकता है। वह एक सामाजिक प्राणी है इसलिए आवश्यक है कि उसका समाज भी स्वस्थ हो।

'सम्पूण स्वस्थ समाज की परिस्थिति तो ससार मे कहा नही है वहिनजी।

"यह सत्य हो मकता है सत्य है। इसीलिए सब स्वस्थ मानव भी आज ससार म नही हैं। मैंने आदश परिस्थितिया म आदश स्वस्थ मानव व उसके समाज का ही जिक्र किया है। मैं तुमसे ज्यादा जानती हूँ कि

कितनी कसी बीमारियाँ विकृतियाँ प्रदूषण इस समाज म हैं जो इसके आत्म बनन म बाधक हैं परन्तु प्रश्न यह नहीं है। प्रश्न व्यक्ति का है कि वह स्वस्थ कस बन सकता है ? प्राप्त परिस्थितिया म वह यदि मर बताए गए सत्य का अनुसरण कर ता निश्चय ही वह उचित स्वास्थ्य स वचित नहीं रहगा चाह आदश वह न हो। जिस समाज म कलि को नारी को प्रस्फुटित होना है उसा को तो वह आकर्षित करेगी उसी को ता वह प्रभावित करेगी। समझी ?

जी।

इसलिए अतर और बाह्य रूप स स्वस्थ रहना स्वाभाविक रूप स प्रस्फुटित होना, आकषणशील होना सुन्दर दिखना कोई पाप नहीं है, अधार्मिक नहा है अनतिक नहीं है। प्रकृतत स्वाभाविक होन के कारण इसीलिए सौन्दय का दखना उसक प्रति आकषण हाना सौन्दयमयी होकर विचरना न अधार्मिक है और न अनतिक ही। हमारे ऋषियों न शास्त्रीय ग्रन्था म इस सौन्दय-दशन व प्रदशन को भी काम का सना दी है। नाक कान आँख त्वचा, मन सबस काम की तप्ति हाती है जिसस कोई पुरुष और कोई नारी मुक्त नहीं है न मुक्त रह सकती है। इसक आगे भी काम का परिधि है जिस विशिष्ट काम कहकर सम्बोधित किया गया है। सुदर इतिहास क युग म उसक पूव और पश्चात् भी एसा युग था जब नर और नारी विशिष्ट काम के लिए भी स्वतन्त्र थ। आज भी ससार के अनक समाजा म इस विशिष्ट काम के प्रति कुठा नहीं है। आर्यों न काम का कभी अनतिक अधार्मिक नहीं समझा। इसी-लिए धम अथ काम माक्ष की प्राप्ति उनके सामाजिक व व्यक्तिगत जीवन के आदश थ। उनक दष्टिकाण स माक्ष प्राप्ति मुक्ति की अवस्था जन्म मरण से मुक्ति काम की प्राप्ति क बिना भा असदिग्ध रूप स असम्भव थी। जीवन को—ब्रह्मचय गहस्थ वानप्रस्थ और सन्यास की अवस्थाआ म विभक्त किया था और यह सब इसलिए कि जीवन की इन अवस्थाआ म ही चारा उद्देश्या की प्राप्ति हो जाय। मत्यु के बाद मुक्ति उनकी कल्पना म नहीं थी। न उनका आदश ही थी। वे जीवन को प्रधानता और महत्त्व देते थे मत्यु का नहा। जीवन की समस्त—

आवश्यकताओं की, इच्छाओं की कामनाओं की वासनाओं की तप्ति उनके जीवन का आदश था। जीवन म ही यदि समस्त कामनाओं स मुक्ति मिल जाय तो फिर जीवन अपन आप म एक निरथक अस्तित्व रह जाता है। ऐसी स्थिति म व्यक्ति अपन आप म, अपन म दिलचस्पी खो देता है। अपनी समस्त क्रियाओं क प्रति उदासीन हो जाता है। इच्छाओं से मुक्ति ही जीवन मुक्ति है। मानव की ऐसी परिस्थिति म मत्यु सहज और स्वाभाविक हो जाती है। इच्छाओं स मुक्ति के बाद मत्यु स्वय अपन आप म जीवन का एक अनुभव मात्र रह जाती है। कहने का तात्पय यह है कि समस्त इच्छाओं की तप्ति क बाद न इच्छा रहती है न जीवन और मत्यु ही। मत्यु को भी जीवन म जी लेन का नाम ही मुक्ति है। इस प्रकार की विचारधारा, यह आदश आर्यों के जीवन का था। यह सनातन धम है, शाश्वत है। इस दष्टिकोण की पष्ठ भूमि म यदि कोई पुरुष कोई स्त्री कोई कुमार कोई कुमारी बनती-सँवरता है, बन-सवर कर विचरती है, तो यह बुरा नही है अनतिक नहीं है अधार्मिक नही है। घर म, समाज म जो बडे-बूढे अभिभावक अपने आश्रितो को इस सौन्दय दशन प्रदर्शन के लिए रोक्त-टोकते है व उनके व्यक्तित्व को सहज स्वाभाविक रूप म अभिवद्धि प्राप्त कराने म बाधक ही बनत हैं। दमन स आश्रितो का व्यक्तित्व उभरकर प्रकाशित नहीं होता बल्कि कुठाग्रस्त होकर व अपनी इच्छाओं की तप्ति के लिए दूसरे अस्वाभाविक रास्ते ढढते है। जीवन के कष्टों की विषमताओं की, कुठाओं की यह भी एक शुरूआत है।

कुछ क्षण अपन कथन की प्रक्रिया को जानने के लिए वह मौन हो गयी। उपस्थित वन्द ध्यानमग्न हो उसक वक्तव्य को सुन रहा था। सगीत के पाठ व अभ्यास के उपरान्त रतिप्रिया प्राय अपनी छात्राओं के समूह को इस प्रकार की चर्चाओं से प्रशिक्षित करता रहती थी। अपने जीवन की उपलब्धियों स उसे सन्तोष था। उसका विश्वास था कि नारी निडर, स्वस्थ, शिक्षित और कुठाहीन होकर ही अच्छी बेटी बहिन पत्नी और माँ बन सकती है। इन गुणों स रहित नारियों को ही उसने पतित होते पाया था। कुछ ही क्षणों की चुप्पी के बाद उसने

सुना—

फिर बडे-बूढे समझदार गृहस्थ के लोग अपनी बहू-बेटियों के बनाव शृगार की हरक्तो को बुरा क्या मानते हैं ?

व उसे बुरा नही मानते। बुरी उच्छखलता है। उन्हें सामाजिक जीवन का, उसकी विषमताओं का ज्ञान है। वे नहीं चाहते कि किसी आवेश म आकर उनके रक्षित, आश्रित पथ भ्रष्ट हो। उनकी रक्षा का, उनके सुख का, उनके जीवन की प्रगति का उन पर उत्तरदायित्व है। पतन के पथ से अपने अनुभव के कारण व अपरिचित नहीं हैं। जब अपने आश्रित या रक्षित की गति वांछित समय स पहले एक सुरक्षित सीमा के पार पहुँचती हुई मालूम देती है, ऐसे समय म उनका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि उस आशकित भय की सूचना स अवगत करा दें। सयम के प्रति सचेष्ट करना बुरा नहीं है वल्कि हितकर है। नियन्त्रण अभीष्ट है परन्तु दमन किसी भी परिस्थिति म श्रेयस्कर नहीं है।'

'मेरे प्रश्न का क्या हुआ वहिनजी ?

यह सब उसी की भूमिका थी। इस सम्बन्ध म अनुभव व रुचि प्रधान है। सडको पर, समारोहो म, उत्सवो पर यह लक्ष्य रखकर आप देखें कि किस रग पर कौन-सा रग खिलता है। अपने आप म कोई रग खराब नहीं है। अच्छा और बुरा सब सापेक्षिक है। स्वास्थ्य के लिए श्रम अत्यावश्यक है। अस्वस्थ शरीर पर कुछ भी नहीं फबेगा। स्वस्थ शरीर पर सब कुछ शोभा देगा। पर एक बात सत्य याद रखो। नारी का कुलागना का भूषण लज्जा है सयम है। उसकी आँखो म स उसके अन्दर को जाना जा सकता है। इन्ही की भगिमाओ स स्त्री और पुरुष नारी की स्वाभाविक दुर्बलताओ को पकडते हैं। इन्हें अपने नियन्त्रण म रखना, वश म करना सीखो कलापूर्ण इसका नियन्त्रण शिक्षण नारी के लिए अत्यावश्यक है। आँखो की पुतलियो और पलको की क्रियाशीलता, गतिशीलता सचालनशीलता म इस नियन्त्रण का रहस्य छिपा है। जो स्त्री इस नियन्त्रण म दक्ष हो जाती है समझ लो, उसने नारी जीवन की एक बहुत बडी समस्या को सुलझा लिया एक उपलब्धि प्राप्त कर ली। नारी जीवन को सुख से जीने की एक कला उसने सीख ली।

"परन्तु यह सम्भव कसे है, बहिनजी ?

'यह सवसम्भव है और बडी सरलता से। यह सामने ही विशाल दपण है। गान के समय नत्य के समय क्या तुम इसम अपनी मुखमुद्राओ को, शारीरिक मुद्राओ को अग सचालन को देख देखकर यथेच्छा शुद्ध नही करती ? मन की इच्छा मस्तिष्क के विचार हृदय के भाव पहले आँखा मे लाना सीखा। चेहरे पर आन के बाद ही वे आया म आ सकेंगे। भ्रू पुतली पलक उसके राए किस मास पेशी की गतिशीलता से उसके सचालन से कस प्रभावित हात हैं यह जानना तब आवश्यक होगा। निरन्तर अभ्यास से इच्छा, भाव विचार का सप्रेषण आसान होता जायगा और एक दिन यह इतना स्वाभाविक हा जायगा कि किसी के यथच्छा प्रषण म किसी प्रयास की आवश्यकता ही नही होगी। पुरुष की अपेक्षा नारी क लिए यह अधिक सुलभ और स्वाभाविक है। क्या तुम देखती नही हो कि एक किशोरी की आखें लज्जा स किस प्रकार स्वभावत स्वत झुकती-उठती है ? पलकें ही नारी की स्वभावसिद्ध लज्जा का आवरण हैं। परन्तु नारी जब उनस यथच्छा यथावश्यकता काम लेना साख लेती है तभी वह नारीत्व की, उसक लालित्य की प्रतिमूर्ति बन जाती है। एसी ही वे नारिया थी जिन्होन ससार क एतिहासिक पुरुषा को अपनी मुटठी म रखा किसी नारी क लिए भी अपन क्षत्र म अपने पुरुष पर अधिकार प्राप्त करना मुश्किल नही है। पुरुष को उसन अपन पेट से पदा किया है। अगुली पकडकर उसे चलना दौडना बोलना सिखाया है। पुरुष के सम्बन्ध म वह उसकी दया की पात्र नहीं। कोइ भी पुरुष उसकी स्पर्धा क योग्य नहा। उसके लिए वह करुणा का दया का पात्र म व रहा है और रहगा भी। क्लिओपेट्रा इवाब्राउन जोसफाइन आम्रपाली इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं जिनके एक सकेत पर क्रमश ब्रूटस हिटलर नेपोलियन अजातशत्रु जस प्रसिद्ध पुरुष बडे स बडा खतरा उठाने के लिए तयार थ।

परन्तु

परन्तु क्या ? मात्र एक सयम के अभाव म पुरुष नारी पर हावी होता है। नारी *काम की आगार है मेरी छोटी बहिनो ! और काम एक*

जीवन विधायिनी शक्ति है जिसस सारा विश्व अनुप्राणित है। उत्पत्ति, स्थिति और लय इसी की प्ररणा के फल हैं। यह अजेय है। इसकी प्रेरणा अदम्य है। प्राणिया म यह एक सावजनीन और सावकालीन प्रवत्ति है। विश्व का समस्त साहित्य इसकी अभिव्यजना स सरस सुदृत और सफल हुआ है। जहाँ एक आर इसका विकृत रूप हीनतम विकारा की, अनिष्टा की सृष्टि रचना है वहाँ दूसरा आर अभ्युदय और महान्य की चरम प्रतिष्ठा प्राप्त करान म यह सक्षम है। जीवन म इस उपेक्षा और उदासीनता की दृष्टि म देखना, बरतना जावन को ही नकारना है। भारत म काम की गणना एक पुरुषाथ क रूप म की गई है। इस अश्लील और हेय भारतीय मनीषियो द्वारा कभी नहा माना गया। इसलिए नारियो का अपनी काम की सब प्रभावमयी शक्ति को पहचानना चाहिए। विवेकशील सयम स व इस चाह जिस अथ के लिए सफलतापूर्वक काम में ल सकती हैं। वस्त्र वाणी रहन-सहन, व्यवहार सब जब सयत नियन्त्रित अधिकृत हो जाता है तभी नारी अपनी शालीनता क सौंदर्य स प्रभावशील बनती है। वस्त्र और चाल भी शालीनता क परिचायक हैं। जहाँ कीमती वस्त्र और जेवर स्त्व स्पधा ईर्ष्या शत्रुता और भय का आमन्त्रण दत हैं, वहीं सादगी शालीनता का उजागर करती है। गौर रग पर प्रत्यक रग शोभा देगा। श्यामल वण पर हल्के रग प्राय पसन्द किय जात चाहिये। पर यह नहा भूलना चाहिये कि स्वास्थ्य और शालीनता सर्वोपरि हैं।'

"क्या काम और शालीनता साथ-साथ रह सकते हैं?"

'निश्चय ही। नगपन से काम शक्ति का प्रदशन नहा होता। शयन कक्ष के वस्त्र उसके बाहर के वस्त्र कभी नहा होन चाहिए। सभ्य दशा की परम्पराएँ भिन्न होते हुए भी उनम एक साम्य है, काम शक्ति और सौदय क प्रदशन क प्रति एकरूपता है। और वह यह है कि नारी के जिस अग पर पुरुष की दृष्टि स्वभावत पडती है उस आवत रखा जाता है। वक्ष कभी नग्न और खुले नहीं रख जाते। आवरण उनके रहस्यमय सौदय की अभिवृद्धि करता है। अपनी रहस्यमयता को खो देन के बाद नारी काम की विश्वविजयिनी शक्ति नहीं रहती। वह एक बाजार की

वस्तु बन जाती है। सुदर दिखने की प्रवृत्ति काम की ही प्रवत्ति है। सौन्दर्य के प्रति सुदर के प्रति आकर्षित होने की प्रवत्ति उसे दखने की प्रवत्ति भी काम की प्रवत्ति है। कौन रग किस समय म, किस मौसम म किस रग के साथ कैसे खिलेगा, यह विचार यह लालसा सब छिपी हुई काम चेतना के सिवाय और कुछ नहा। बालपन स जरा तक सुन्दर व सौम्य दिखने की प्रवत्ति मानव जाति म नहीं जाती। निरन्तर अभ्यास स व्यवहृति स चाहे काई उसकी सुगमता के कारण उसे महसूस न करे परन्तु फिर भी काम के अस्तित्व से—उसके प्रच्छन्न प्रभाव से इकार नहीं किया जा सकता। समाजा म विविध रगा पर विविध वस्त्रा के रगा के मेल पर उनके सामजस्य पर दृष्टि रखकर आप व्यावहारिक रूप म अपने लिए अपनी पसन्द के निणय पर इस सम्बन्ध म पहुँच सकती हो। अपने कक्ष के शीशे की प्रतिच्छाया स भी आपकोअपने योग्य निणय का अनुभव प्राप्त हो सकता है। काम को अपनी हीनता न समझो। यही तो नारी की अपना एकमात्र प्राकृतिक शक्ति है जिसके बल पर वह ससार का अपने आगे झुका सकती है। नारी के लिए काम का नकारना अपने अस्तित्व का नकारना है। जीवन क रस का उसक माधुय को खो देना है।

इतने म ही दीवार की घडी न चार बजा दिये। रतिप्रिया अपने स्थान स उठ खडी हुई। उपस्थित कुमारिया न भी उठकर उसका अभिवादन किया। परन्तु अब तक घर का सहायक सेवक स्थालिका म चाय लेकर उपस्थित हो गया था। वह पुन बठ गई। एक कुमारी द्वारा बनाई हुई प्याली को लेकर उसने पीना शुरू कर दिया। अन्य कुमारिया न भी साथ चाय पी। सिफ एक बार उन्हाने रतिप्रिया से फिर सुना—

नारी के लिए प्रश्न शक्ति का नहीं है। वह उसकी स्वामिनी तो है ही। उसके लिए समस्या उस अपनी शक्ति के सचय और सयम की है। उसके व्यवहार की है।

रतिप्रया जब कक्ष स बाहर आई तो घर की एक प्रौढा न विनात होकर उसके हाथ म एक पत्र दिया। मुस्कराकर उसने उसे ले लिया और बिना पढे ही वह अपने लिय इन्तजार करती हुई गाडी की ओर अग्रसर हुई। उसके बठते ही चालक अपने गन्तव्य पथ पर वाहन को ले चला।

रतिप्रिया को इस नगर म आये करीब चार वप बीत गये थे। शुरू म जिस आदमी के साथ वह आई अब वह इसके साथ नहीं था। उसके चले जान के बाद चार-पाँच व्यक्तियों से और भी उसका सपर्क रहा, परन्तु व भी एक एक करके चल गय। रतिप्रिया की सामाजिक प्रतिष्ठा उन सबके उसके यहाँ आने-जाने क कारण घटी नहीं थी तो बढ़ी भी नहीं थी। वे प्राय सब एसे व्यक्ति थे जो उसके रूप सौंदय, यौवन, व्यवहार आदि से आकर्षित होकर उसके यहाँ आये थ, परन्तु अपनी किसी स्वाथ सिद्धि की शीघ्र सफलता न देखकर वे स्वत ही शनै शन दूर हो गय। यह बात नहीं थी कि किसी का उसस झगडा या मनमुटाव हुआ हो, परन्तु समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति होन के कारण उन्होंन अपने अथहीन आवागमन का समाप्त करना ही अपन लिये श्रेयस्कर समझा था। रतिप्रिया को इस सबस न दुख था न क्लेश ही। जीवन की अनुभवशीलता न उस प्रत्येक प्राप्त परिस्थिति से मुकाबला करन की शक्ति दे दी थी। अपनी रमणीयता के प्रति उसकी शक्ति क प्रति वह सजग थी। व्यवहार म कुशलता से उससे काम लेना भी उस आता था। पुरुष क प्रति उसका विद्रोह नहीं था। शकाएँ थी जिन्ह वह अपने सयम से दूर करती रहती थी।

आज वह घर आई तो अजय सो रहा था। उसने देखा कि खाने की थाली एक ओर मेज पर पडी हुई है। उसे मालूम हो गया कि उसने खाना खा लिया है। उसके तकिय के सहारे दो-तीन ग्रन्थ एक ओर पड़े हुए थे। वात्स्यायन का कामसूत्र भी उनम एक था। एक साहित्यिक ग्रथ था, कालिदास ग्रन्थावली। एक कला के सम्बन्ध म छोटी-सी पुस्तिका थी। उसन आकर अपना शाल समटकर कुर्सी की पीठ पर

रख दिया। कपाट पर ह्का-सा हनन हुआ। वह द्वार की ओर बढी कि अजय बिस्तर पर उठ बठा। जब तक उसकी तथाकथित माँ सामने आ गई थी। पूछा—

चाय ले आऊँ ?

अवश्य।

नींद म विघ्न तो नही पडा ?

बिल्कुल नही। आज तो खूब सोया।

अब अपरिचित नहा रह न। साथ ही उसके चेहर पर एक हल्की हँसी खेल गइ।

आपन वात्स्यायन और फ्रायड दोना को पढा है ?

क्या नही ?'

'क्या अन्तर है ?

एक आदशवादी है दूसरा यथाथवादी।

और आप ?

'मैं दाना हू।

मतलब ?

मेरे विचार मे दोनो एक दूसरे क पूरक ह। ज्ञान की इति कही नही है। *समय के साथ सामाजिक विषमता बढ़न पर और भी नए काम* क रूप आर सिद्धात दृष्टि म आ सकते है। वात्स्यायन धम से काम की ओर अग्रसर हुए हैं। फ्रायड की प्रवत्ति मेरे विचार से काम से धम की ओर बढी है। परन्तु दोना न मानव और समाज को महत्व दिया है। उसके सुनिर्माण की ओर दोना की चेष्टा है उसक विनाश की ओर नही। वात्स्यायन वास्तव म समाजशास्त्री ह और फ्रायड मनोवैज्ञानिक। आधुनिक साहित्य पर जो प्रभाव उनके मनोविज्ञान का है वह उनके पूव क साहित्य म नहीं मिलता। परन्तु यह निश्चित है कि दोना जीवन म काम की प्रमुखता को स्वीकारते हैं। समाज का विघटन व्यक्ति का विनाश दोना म से किसी का भी ध्येय नहीं है। दाना इसे अश्लील असामाजिक नहा मानते। सयम इसीलिए दोना का आदेश और उपदेश है।

क्या बात आख त्वचा जिह्वा नासिका की अनुकूल प्रवत्ति पर काम की तप्ति सभव है ?

"निश्चय ही।'

जसे ?

आप।

मैं समझा नही।

क्या मुझे देखन स मरी वाणी सुनन स मेरे स्पश मे मरी ससर्पाशत वायु से आपको आन द नही मिलता है ? छिपाइये नहा, जवाब दीजिय यह कोई बुरी बात नही है। असाधारण भी नही है।'

मिलता है।

यही काम है। यदि यह प्राप्त नही होता तो आप यहा आन नहीं। आकर ठहरते नही। इद्रिया मन स सयुक्त हाती ह और मन अन्त करण और आगबढिय तो आत्मा है। आत्मा का चाह कोई न माने परतु वात्स्यायन तो मानते थ। उनके अनुसार आत्मा मात्र साक्षी है, अकता है इसलिए बुद्धि से मन विविध सुखा का उपभाग करता है। यह सुख काम का ही फल है। वात्स्यायन और फ्रायड दाना न यह मत व्यक्त किया है कि शरीर के अगा की सुखद उत्तजनाएँ आर परितुष्टियाँ कामक्षत्र की लीलाएँ ह। स्त्री-पुरुष दोना परस्पर म एक-दूसर के लिए काम के आयतन है। समप्रयाग म दोना के कामजनक क्षेत्रा म उत्तेजनाएँ बढती है। चुम्बन, आलिंगन परिरभण आदि आदि पारस्परिक व्यवहार इसी क फल ह। सष्टि का मनारथ, उनकी कामना पूर्ति फिर आगे की प्रक्रिया है। य व्यक्ति के अपन—आभिमानिक सुख ह। इनक साथ विशेष स्पश के विषय से जा अथ प्रतीति हाती है, वह विशिष्ट अथवा प्रधान काम है। परस्पर म जननेंद्रिया का विशेष स्पश ही सहवास की भूमिका का पदा करता है। इन्ही की भूमिका पर सष्टि की सम्भावनाएँ फिर विलसित और मुख रित होती ह। यही क्रम है प्राकृतिक प्रक्रिया है जिस पर समस्त स्थिति, सारा अस्तित्व आश्रित है।

'क्या सारे स्त्री पुरुष इस एक नियम से शासित हैं ?

'यह सावजनीन है।'

'आपके लिए भी लागू है ?'

मैं अपवाद नहीं हूँ।

देवी रतिप्रिये ! फिर मैं इसके सुख से वंचित क्यों हूँ ?' अजय अपनी घनिष्ठता में सभ्यता की सीमा से बाहर हो गया था। रतिप्रिया को हँसी आ गई। अपने को संयम में रखते हुए वह बोली— साधारण काम सुख के तो आप अधिकारी रहे ही हैं ? रहा विशिष्ट काम सो '

' सो क्या ?

वह जीवन में कभी तो आपने प्राप्त किया ही होगा। अजय बाबू ! भ्रमर एक उद्यान के समस्त फूलों का रसास्वादन नहीं कर सकता। एक शहर में भी अनेक उद्यान होते हैं। पृथ्वी के समस्त उद्यानों और उनमें खिले फूलों की तो कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। शरीर सीमित होने के कारण उनकी स्त्री पुरुष के सम्पर्क की एक सीमा है। सीमा में रहना ही संयम है। क्षत्र शक्ति सामाजिकता सभी दृष्टियों से व्यक्ति का संयत रहना चाहिए। काम का सम्प्रयोग भी पारस्परिक वेदनाओं पर आश्रित है। प्रत्येक व्यक्ति इसलिए प्रत्येक अन्य व्यक्ति को चाहे जब चाहे जैसे प्रभावित नहीं कर सकता। इच्छा लालसा साधन अवसर संवेदना और भी न जाने क्या-क्या व्यक्त अव्यक्त चेतना अवचेतनाओं पर यह विशिष्ट काम व्यवहार आश्रित है कोई कुछ नहीं कह सकता। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अपनी विशिष्टताएँ व विवशताएँ होती हैं। नारी काम का आयतन होते हुए भी वह नष्ट भ्रष्ट पतित होना नहीं चाहती। वह आत्मरक्षा और अहम का महत्व जानती है। रतिप्रिया जानती है कि काम आहार की तरह शरीर में अनेक विकृतियाँ और उन्माद पैदा करने में सक्षम है उनके पोषण की शक्ति से भी वह अपरिचित नहीं है परन्तु साथ ही उसे यह भी ज्ञान है अनुभव है कि उस काम का कितना कब कैसे कहाँ आश्रय लिया जाय।'

जीवन में आपका ध्येय क्या है ?

अब ने ?

हाँ।

शिक्षण द्वारा सामाजिक सेवा।

पुरुप, उनका सभ्य समाज क्या इसके ज्ञान स क्या इसके शिक्षण म परहज करता है ?'

इस प्रकार की शिक्षा क कोई सस्थान भी ता नही हैं ।

सस्थान तो बन सकते हैं । किसी सामाजिक कायकर्ता का इसकी आर ध्यान ही नही गया । इसक सम्बन्ध म इसके विरुद्ध लाग पूर्वाग्रह स ग्रसित हैं । यह बात नही कि काम के बिना किसी का काम चलता हो । सभ्य-स-सभ्य लाग बड-से-बडे अफसर अपनी काम तुष्टि क लिए भ्रष्टाचार की नतिक पतन की शरण ल लेंगे, पर गहस्थी को स्वग बनाने की चेष्टा नही करेंगे ।

आपका यह कसे मालूम ?'

अजय बाबू ! आपकी इस रतिप्रिया न जीवन की अनक विभिन्नताए देखी हैं । उन सब म ता अभी जाने की आवश्यकता नहा । परन्तु यह बता देना चाहती हूँ कि उसम कुछ अरस सेलस गल काल गल स्वागती व मुशी अथवा सक्रटरी का काम भी सस्थाओ म व व्यक्तियो के साथ किया है । उसस व्यक्तिगत अनुभव है कि बडे-स-बड अफसर बडे से-बड विद्वान बड स-बड समाज सवी मन्त्री सुधारक सुधारवादी सब विवाहित होते हुए भी अपन गहस्थ जीवन म काम क सम्बन्ध म अतप्त थ । आपको सुनकर आश्चय हागा कि सुन्दर सजी हुई रमणी के साथ एकान्त मिलत ही उनका सब बडप्पन प्राय अनावरित हो जाता था । उस समय के अपन स्वय के व सहेलियो के अनुभव से मुझे ज्ञान हुआ कि एक रमणी का, एक कामायनी का पुरुप पर क्या प्रभाव होता है । अपन पुरुप पर तो उस प्रभाव का फिर अन्दाजा भी नही लगाया जा सकता । उसी अनुभव स मुझे मालूम हुआ कि बिचारा पुरुप समाज की दृष्टि म, महान होते हुए भी एक रमणी क समक्ष कितना विवश है कितना क्षुद्र है । अपन उसी अनुभव क कारण आज मैं कह सकती हूँ कि हमारी गहस्थियो म घरा म पुरुप और नारी दोनो के लिए सम्पूण काम सन्तुष्टि की पूरी व्यवस्था ही नही है । इसीलिए परिवार टूटते है सयुक्त कुटुम्ब की प्राचीन व्यवस्था बिखर रही है । एक बडा अफसर, एक मत्री

अभिकर्त्ता, प्रतिनिधि अथवा दलाल का यह कहना है कि उसे पैसा नहीं चाहिए वह उसके पास बहुत है, उसे औरत चाहिए यदि काम कराना है तो उसका इन्तजाम करो, तब उसकी असन्तुष्टि, उसके गृहस्थ जीवन का खोखलापन अपनी समस्त विभीषिका के साथ सामने आ जाता है। यह सब मैंने मेरी परिस्थितियों में रही नारियों ने देखा है, जाना है, अनुभव किया है। अजय बाबू! क्या ऐसे व्यक्तियों के पतन की विविध सीमाएँ निर्धारित की जा सकती हैं? रतिप्रिया जानती है कि गृहस्थ, उसकी नारियाँ उसकी पत्नियाँ और कुमारियाँ काम के इस अत्यावश्यक विषय से अपरिचित हैं जिसके कारण एक सर्वसाधनसम्पन्न गृहस्थी भी स्वर्ग के सुख देने की बजाय नरक की यातनाएँ देना प्रारम्भ कर देती हैं। अजय बाबू! बहुत थोड़े से गृहस्थ, परिवार ऐसे होंगे जो इस काम की अशिक्षा के दुष्परिणामों से स्वतन्त्र हों। समाज के सुख को, अपने देशवासियों के वास्तविक सुख को सुरक्षित रखने के लिए आपकी रतिप्रिया ने कुछ समय पहले यह निश्चय किया कि उस काम की शिक्षा का यह काम अपने जिम्मे लेना चाहिए। प्रारम्भ में कुछ रुकावटें अवश्य आईं। परन्तु आज स्थिति भिन्न है। अनेक परिवारों में उसका जाना-आना हो गया है। शौक से बड़ी उत्सुकता से अनेक कुमारियाँ, पत्नियाँ अपनी-अपनी समस्याएँ मेरे सामने रखती हैं। अनेक को मेरे सुझावों से सन्तोष है। अपनी सफलता पर मुझे अभिमान है। इसी से मेरी रोटी रोजी चल जाती है, समाज का उपकार भी हो जाता है।

'क्या किसी परिवार में, उसके पुरुषों ने आपके साथ अभद्र व्यवहार नहीं किया?

'छोड़ो इस बात को, अजय बाबू! पहले तो परिवार में एक चरित्रहीन पुरुष भी सद्व्यवहार का ही नाटक रचता है। नारी से प्रोत्साहन मिलने पर ही उसकी हिम्मत बढ़ती है। यदि वह नहीं मिलता तो प्रायः पुरुष अपनी उचित सीमा में रहते हैं। अपवाद न हों ऐसी बात नहीं है। उस दिन भी तो वह पत्र आपने देखा था। एकान्त मिलन की अनेक वैसी याचनाएँ आती हैं। पर, मेरे पर प्रभावशील नहीं हैं। उपेक्षित होने पर स्वतः सब बन्द हो जाता है।"

'ऐसी परिस्थिति म फिर आप ?'

'क्या करती हूँ यही न ?

हाँ !'

अपने पर सयम और उनकी उपेक्षा।'

इतन म ही नीचे कुत्ते के भौंकने की आवाज आई। रतिप्रिया ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—

जो आपके साथ करती हू। जो साथ बठन के लायक होता है उसके साथ बठकर चाय पी लेती हूँ। बातचीत के लायक होता है उससे इधर-उधर की कुछ बात कर लेती हूँ। उसके साधारण काम की तुष्टि हो जाता है। बस। देखिये मेरा जॉनी' भौंका है। किसी अपरिचित क आगमन की सूचना है। मैं अभी आई। और इतना कह वह कमरे के बाहर होकर पडिया से नीचे उतर गई। आगन्तुको के आगे पालतू जॉनी खडा भौंक रहा था। उसके आकर चुप करनेपर वह शान्त हो गया। आगन्तुको म से एक ने पूछा—

देवी रतिप्रिया का मकान ?'

आइये आइय।'

'आप ही है ?

अब अधिक मत बनिय। आइय।

पुरुष वाला 'मुद्दत हुई दीदार हुए। गालिब न खूब समझकर शेर कहा है—

वहाँ वो गुरुरे अज्जो नाज यहाँ वो हिजाबे पासे वजा।

राह म हम मिलें कहाँ बज्म म वो बुलाए क्या।'

साथियो ने दाद दी भई वाह'—उन्होन सुना। अब ऊपर तशरीफ ले चलिय। यह लो, माँ भी आ गइ।

क्या है, बेटी ?

'अतिथि देवता पधारे हैं। इनके सम्मान मे बढिया सी चाय बनाकर जल्दी मे आना। साथ ही रतिप्रिया नवागन्तुको के पीछे-पीछ ऊपर चल दी।

देखो वीणा । स्त्री हो, चाहे पुरुष इन्सान जब वस्तु बन जाता है तब उसमे इन्सानियत नही रह जाती । जब किसी व्यक्ति परिवार समाज जाति राष्ट्र की आँखें मात्र पैसा मात्र आर्थिक सम्पन्नता की ओर केन्द्रित हो जाती हैं फिर वह एक पण्य अथवा बिक्री की वस्तु के अलावा और कुछ नही रह जाता । रुपया, पैसा सम्पत्ति साधन हैं साध्य नही । '

'फिर साध्य क्या है ?"

सुख ! और वह उस अपने घर मे ही प्राप्त हो सकता है । नारी के लिए जिस घर म सुरक्षा सम्मान, सुख प्राप्त हो वह उसके लिए आदर्श घर है । वह अपने घर की स्वामिनी होती है । वहाँ उसकी स्वतन्त्रता को कोई चुनौती नही दे सकता । '

इस समय एक सम्पन्न परिवार के सजे हुए एक कक्ष म रतिप्रिया शालीन सी महिलाओ के एक समूह को सबोधित कर रही थी । प्रस्तुत गोष्ठी ने प्रश्नोत्तर प्रणाली का रूप ले लिया था । उसने सुना—

यदि किसी पतिव्रता स्त्री का पति वेश्यागामी हो परस्त्रीगामी हो जाए तो क्या उसे उसकी पत्नी ठीक कर सकती है ?'

'क्या नही ? निश्चय ही । परन्तु, हर इलाज के पहले, चिकित्सक को रोग के कारण ढूढने पडते हैं । निदान के बिना रोग का इलाज नहीं होता ?"

'जैसे ?'

'पुरुष परनारीगमन क्यो करता है ?'

'ऐयाशी के लिए ।'

मतलब ?"

समस्त समूह म एकबारगी मौन छा गया। कुछ क्षण क विराम क बाद रतिप्रिया ही बोली—

कहती क्या नही कि अपनी काम-तुष्टि के लिए वह वेश्यागमन करता है।

यही सही।

मैं जानती हू कि आप मेरे प्रश्नो का सीधा स्पष्ट उत्तर क्यो नही देती। शायद इसलिए कि गहस्थ की एक नारी के लिए काम सम्ब धी चर्चा करना पाप है कम स कम शालीनता के बाहर ता है ही। पर एसा सोचना ठीक नही है मरी बहिनो ! जब धम अथ, काम मोक्ष जीवन के आदश ह तो काम की चर्चा के विषय म परहेज क्यों ? क्या धम, अथ मोक्ष की चर्चा, उनके अध्ययन उनकी शिक्षा पर आज तक किसी न रोक लगाई है ? मात्र काम से सारे ससार की उत्पत्ति हुई है। इस एक काम के ऊपर इस ससार की स्थिति, प्रगति और अस्तित्व कायम है। मेरी आपकी आपके प्रियजनो की, हमारे बुजुर्गों की सबकी उत्पत्ति का कारण एकमात्र यह काम था। फिर वजना क्यो ? हिचक कसी ? अश्लीलता, अशालीनता तो वह है जिसे देख-सुनकर व्यक्ति का मन मस्तिष्क, हृदय विकृत हो अपनी प्राकृतिक शान्ति को खो दें अपने विवेक के स तुलन व साम्य के प्रति स्तब्ध होकर किंकर्त यविमूढ हो जाय। काम धमसम्मत है शास्त्रसम्मत है प्रकृतिसम्मत है स्वभाव सम्मत है। जीवन मे इसके प्रति उदासीन रहना जीवन की नाव को अपन को अपने परिवार और समाज को नष्ट करना है। इस एक काम से सारे ससार की उत्पत्ति हुई है। इस एक काम की समझ और उसके अनुरूप उचित व्यवहार के अभाव मे सहस्रो लाखो ही नही करोडो व्यक्ति और परिवार ससार सागर की तूफानी लहरो मे भटक कर अ धेरे मे मत्यु मुखी चट्टानो से टकरा जाते हैं।

पुन गोष्ठी-समाज म एक मौन छा गया। कुछ क्षणो के पश्चात् समूह म स एक बोली—

कारण और उपाय क्या दोनो आप बता सकती हैं ?

क्यो नहीं ? पुन एक चुप्पी छा गयी जिसे भग करते हुए रति प्रिया ने कहा—

मेरे प्रश्नों को सही समझ कर यदि आप उनका उत्तर दें, अपने मन म ही दे लें, तो कारण और उपाय दोना ही आपकी समझ म आ जायेंगे। जिसे हम जीवन मे व्यवहृत करते हैं वह रहस्य नहीं है। आप सब विवाहित हैं ?'

'जी !"

'स्त्रियो का कार्यक्षेत्र घर और पुरुषा का उससे बाहर है ?'

अवश्य।"

बाहर से जब पुरुष घर लौटता है तो क्या आप उसका अपनी मुस्कान से स्वागत करती हैं ?

'नही।'

क्या उसके आने की प्रतीक्षा आप बेचनी से करती हैं ?"

'नही।'

'क्या विलम्ब से आने पर उसका कारण पूछती हैं ?"

नहीं।"

क्या उसके और अपने कमरे को आप स्वच्छ रखती है ?"

'कभी कभी।'

'क्या उसकी परेशानी का कारण पूछती हैं ?

'नही।

'क्या उसकी परेशानी को अपनी हँसी और मुस्कराहट से दूर करने की चेष्टा करती है ?'

'नहीं।'

'क्या उसके आवश्यक वस्त्र उस समय पर यथास्थान मिलते हैं ?'

नहीं।

'क्या आप स्वय उसके वस्त्रा के चयन म हिस्सा लेती हैं ? उसकी पसन्द को अपने वस्त्रा के चयन में स्थान देती हैं ?"

नहीं।'

'क्या आपने उसके खाने-पीने की पसन्द को जानने की चेष्टा की है ?

यदि नहीं तो क्यों नहीं ? यदि हाँ तो क्या उसे यथासमय वे सब प्राप्त होते हैं ? क्या घर लौटते ही आप उसे कुछ एकान्त क्षण देती हैं ? क्या अपनी उसकी पसन्द को भी आपने जाना है ? वह आपको किस रूप मे देखना चाहता है, कमरे का कौन सा रंग उसे पसन्द है उसकी साज-सज्जा क्या होनी चाहिये उसे कौन सी गन्ध कौन से फूल आपकी कौन-सी साडी कौन-सा पहनावा उसे पसन्द है, क्या यह सब आपने मालूम करने की चेष्टा की है ? इस सब व्यवहार में धनी अमीर की हैसियत काम नहीं करती मात्र व्यवहार की कुशलता का यह न्याय है। इन छोटी छोटी बातों की व्यवहृति से पुरुष का अपने घर की ओर अपनी पत्नी में खिंचाव होता है आकर्षण बढ़ता है।' इतना कह वह चुप हो गई। प्रश्न हुआ—

"बस। क्या इतना ही पर्याप्त है ?'

नहीं। ये तो प्रारंभिक बातें हैं जो घर को गृहस्थ को व्यवस्थित करती हैं। साधारण हैसियत की समझदार पत्नी भी इन मामूली नुक्तों की व्यवहृति से अपने घर को सुखमय बना सकती है। पति पत्नी के बीच गृहस्थी की समस्याएं यहीं समाप्त नहीं हो जातीं।" रतिप्रिया अपने वक्तव्य को आगे बढ़ाने के लिए कुछ सोचने लगी। कुछ क्षण के विराम के बाद उसने कहना प्रारंभ किया बहिनो ! मानव सामाजिक प्राणी है। समाज की एक इकाई होने के कारण वह अन्य व्यक्तियों के सपर्क में आता है। स्त्री और पुरुष दोनों उसके सपर्क के विषय अथवा पात्र हो सकते हैं। घर की स्वामिनी का पत्नी का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि अपने घर और मेहमानों की वह स्वयं आवभगत करे। सामाजिक पुरुष चाहता है कि उसके घर की उसकी, उसकी पत्नी की प्रशंसा हो। गरीब से गरीब भी अपनी मुस्कान, आसन और पानी से अपने घर आए मेहमानों का स्वागत कर सकता है। वास्तविक आत्मीयता छिपी नहीं रहती। उसी प्रकार औपचारिक बर्ताव भी चाहे वह कितना भी प्रदर्शनकारी क्यों न हो अपनी असलियत प्रकट किये बिना नहीं रह सकता। घर आए हुए मेहमानों के स्वागत मे स्वामिनी का स्वयंरत होना उसकी उनके प्रति सम्मान और हार्दिक संवेदना का द्योतक है। उनके स्वागत में खान-पान की सामग्री उतना महत्व नहीं रखती जितनी संवेदनशीलता रखती है।

अनेक बार इस संवेदनशीलता के अभाव म भी पति-पत्नी के बीच तनाव बढ जाता है। आप अपनी सहेलियो क घर जाने पर जो सत्कार पाती हैं उनस अधिक आपका सवेदनशील व्यवहार होना चाहिए।"

"जस ?"

'क्या आप अपने घर आए महमाना के बच्चो को प्यार-पुचकार देती हैं ?"

'नही।

'क्या आपने अपने घर आई स्त्री के वस्त्रो की, उसके जेवरात की, उसक यौवन व सौन्दय की उसकी सज्जा की एकात्मकता की, उसकी वाणी की यदि मूक हो तो उसकी सौजन्यमयी व शालीन मूकता की तारीफ की है? बहिनो! याद रखिये कि अधम व उत्तम व्यवहार के लिये किसी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। अपने लिये जो व्यवहार आप चाहती हैं वही व्यवहार आप दूसरे को दीजिये। पुरुष अपने शौय और नारी अपने सौंदय की प्रशसा से प्रसन्न होती ही है। बार बार की स्मृति और अभ्यास स यह स्वय सिद्ध हो जाता है। यदि कोई पुरुष या स्त्री मात्र इस एक सिद्धात मे कौशल हासिल कर ले तो उसके सुसस्कृत व व्यवहार कुशल होने म उसे आगे कोई नही रोक सकता। पारस्परिक व्यावहारिकता का यह सुसम्मत महामत्र है।'

महिलाओ का समूह रतिप्रिया क सबोधन को बडे ध्यान व दिलचस्पी स सुन रहा था। उसकी वाता के सदर्भ म सब अपने मन, हृदय को टटोलने लगी थी। ऐसी कोई खास बात नही थी जो उनके लिए नयी हो अथवा बोधगम्य न हो। उसका सबोधन सबके लिये सरल और मान्य था। व्यवहार मे यदि कोई बाधा आ सकती थी तो मात्र अपने व्यक्तिगत वहम की। रतिप्रिया न अपने समक्ष वन्द को विचार और मनन में मग्न देखा। कुछ क्षणो के अपने मौन को भग करते हुए वह बोली, "मात्र विचार और मनन स एक गहस्थ की सफलता व सुरक्षा साध्य नहीं है। आवश्यक है उसके लिए सयत, सिद्ध व्यवहार। वह भूमिका तो हुई आपके सामाजिक जीवन की सफलता की। पर मात्र इसी से नारी का अपना सुख सहज नहीं हो जाता। जो प्रथम प्रश्न पूछा गया था

उसकी समस्या का हल, उसकी पूर्ति और जगह है। जानती हो उस जगह को ?"

"नही।'

'और यदि मैं कहू कि आप जानती हैं सब उसस परिचित है ? '

' नही।

रतिप्रिया क चेहरे पर उत्तर सुनकर एक हल्की-सी हसी फैल गई। वह बोली—

"क्या आप अपने शयन-कक्ष स परिचित नही हैं ?"

"उसस तो परिचित हैं।'

बहिनो ! यही तो वह स्थली है जो नारी क जीवन को आजीवन म घटित करती है। यही वह शयन मन्दिर है जहाँ नारी को उसके मवसुख का वरदान मिलता है। यही वह क्रीडास्थली है जहाँ वह अजेय बनती है। पुरुष स यहाँ पराजित होने के बाद उसका जीवन जीवन नही रह जाता। उसक जीवन का जहाज यही से भटकता है कर्फानी तूफानी लहरा स डगमगाता हुआ चट्टानों से टकरा कर जीवन सागर की गहनतम तह म चूर चूर होकर डूब जाता है। यही शयना गार वह स्थली है जहाँ प्रेम की बाजी—उसका खेल—काम के शस्त्रो से खेला जाता है। काम, देव है। सबसे बडा, सबसे अधिक सशक्त देव। हमारे धम के आदि ग्रन्थ मे लिखा है कि आदि पुरुष के मन म सवप्रथम इच्छा काम की हुइ। हिरण्यगभ सूक्त का हिरण्यगभ इसी काम का परिणत अवतार माना गया है। वह पहले अद्ध नारीश्वर था। आधा पुरुष, आधा स्त्री। जब पुरुषतत्व और स्त्रीतत्व अलग अलग हुए तभी उनमे प्रजनन की शक्ति उत्पन्न हुई। यह सदभ सिफ मैंने इसलिए दिया है कि आप काम का धमहीन अधम सम्मत न समझो। एक नही ऋग्वेद के कथित सदभ के बाद भी सैंकडो सदभ वेदो उपनिषदो स्मृतिया, व साहित्य मे हम इस कामदेव की बाबत देखने को मिलते हैं। भारत मे काम सबन्धी जीवन के विषय म इतना अधिक साहित्य है कि पाश्चात्य विद्वानो के अनुसार भी, वसा प्रौढ़ और उन्नत साहित्य पश्चिम मे नही था। हा, मैं क्या कह रही थी ?

"शयन मंदिर ।" समूह म से एक ने कहा।

'ठीक है।" दो एक क्षण के विराम के बाद रतिप्रिया ने अपना वक्तव्य जारी रखते हुए कहा—

'घर का शयन-कक्ष ही वह स्थली है जो पुरुष को सबसे अधिक घर की ओर आकर्षित करती है। चाहे दिन मे यह किसी उपयोग में आता हो, रात्रि म यह स्वच्छ और सजा हुआ होना ही चाहिए। दो शय्या वाञ्छनीय हैं। इसकी सज्जा, रंग, रोशनी, चित्र, गन्ध आदि आदि सब में काम की प्रेरणा होनी चाहिए। क भी मत भूलिए कि काम की तृप्ति का अभाव पुरुष को भटकने पर मजबूर कर देगा। गरीब, अमीर ज्ञानी, साधु संन्यासी सब इस काम की शक्ति के मोहताज हैं। यदि आपको पुरुष के शौय से शयन मन्दिर म राहत लेनी है तो उसे विनोद के लिए और कुछ पर्याय दीजिए। देखती नहीं कि अमीर की कोठी मे, राजा के महल में गरीब की झोपडी से कम सन्तान उत्पन्न होती है। उसका कारण यही है कि जब गरीब के पास विनोद का, अपने दिल बहलाने का और कोई साधन अथवा पर्याय नहीं होता तो वह केवल विशिष्ट काम से अपने दिल को राहत देता है।'

"काम का पर्याय ?"

'विशिष्ट काम से दूर रखने के लिए यह आवश्यक है कि स्त्री और पुरुष चाहे कोई भी हो, किसी विनोदमयी कला का सहारा लें। जीवन म कला का महत्व इसीलिए व्यावहारिक रूप म यह है कि वह पुरुष और स्त्री की काम को अति से सुरक्षा करती है। जीवन म कला का महत्व जीवन का उन्नयन है—उत्मादन है। कलाकार जब भी अपनी कला म व्यस्त अथवा रत हो जाता है, तब उसकी सह धर्मिणी वह कला हो जाती है। स्त्री पुरुष म और पुरुष स्त्री म, विलास रत रहने की बजाय व कला म विलास करने लग जाते हैं। इस प्रकार विशिष्ट काम से उसको अति से राहत मिल जाती है। काम की ही तरह कला व्यक्ति को, उसके मन को मस्तिष्क को, हृदय को उसकी इच्छा अथवा वासना को विचार को, भावना को अपनी ओर बाँधे रखती है।

"बहिनो ! आपको अपने पुरुष की, उसके शौर्य की, उसकी कामुक शक्ति और अभिव्यजना का अन्दाजा लगाते देर नहीं लगेगी। जब भी पुरुष की शक्ति आपके लिए अप्रिय हो जाय, आप उसकी असन्तुष्टि का मान करें, तुरत उस नई दिशा उसकी शक्ति को नया घुमाव देने की चेष्टा करें। जो बात पत्नी के लिए सत्य है वही पति के लिए भी सत्य। गहस्वामी और गहस्वामिनी जब भी अपने घर म, गहस्थ मे, काम का आविर्भाव देखें उन्हे चाहिए कि उसके घातक होने के पहले ही वे उसकी दिशा परिवतन कर दें। बडे और व्यवस्थित घरों में नियमपूवक सुबह शाम सबके लिए पूजा ध्यान भजन कथा इसी लिये आवश्यक कर दिया जाता है। किसी भी रूप म निरन्तर व्यस्तता मन और कम से कायक्रम मे लगे रहना कामदेव को उसकी परिधि मे रखने के लिए सहायक होगा।'

वया काम का धम स सम्बन्ध है ? '

"भारतीय सस्कृति मे तो निश्चयपूवक।

'कसे ?"

'धम क्या है ?"

'पूजा पाठ, हरि सुमरन।

'बस !"

"शास्त्र पठन, उनका ज्ञान।"

'बस !'

'फिर आप कहिए।'

'भारतीय सस्कृति मे एक शुद्ध भारतीय की समस्त दिनचर्या उसका धम है। जो जीवन मे व्यवहृत न हो प्रतिदिन व्यवहार मे न आये वह भारतीय का धम नही। उसके जीवन की दिनचर्या मे ही उसका धम परिलक्षित है।

'जसे ?"

सुबह ब्राह्ममुहूत्त मे उठना नित्य नमित्तिक कम के बाद व्यायाम अथवा शारीरिक श्रम स्नान पूजा, अध्ययन या गोष्ठी, अथ उपाजन के काय घर की आवश्यकताओ की व्यवस्था, आमोद प्रमोद, सुबह

शाम नियमित भोजन, शयन और फिर उसके बाद जागरण—यही एक भारतीय की दिनचर्या है। यह दिनचर्या ही उसका धम है। प्रत्येक साल, प्रत्येक मोमम, प्रत्येक महीने मे विभिन्न त्यौहारो की उनके उत्सवो की भिन्न भिन्न वहुलता, उनकी सरसता, दनिक जीवन की एकरसता, एक स्वरता विरसता ऊब उक्ताहट को दूर करने के लिय काफी है। साधारण भारतीय के लिए उसके जीवन का दिन प्रतिदिन का यह काय-क्रम ही उसका धम है।

'इस धम का अभिप्राय क्या है ?'

'स्वग। सुख।"

और मोक्ष ?'

स्वग और मोक्ष एक नही है बहिन जी। स्वग मे मोक्ष नही है वहा सुख है। मात्र सुख। धार्मिक व्यक्ति सुख प्राप्त करता है स्वग प्राप्त करता है। मोक्ष नही।'

फिर मोक्ष क्या है ?"

'वह भौतिक अस्तित्व की वह स्थिति है जो महाभूत अनन्त म लय हो जाती है। मोक्ष हो जाने पर न इच्छा रहती है, न अस्तित्व, न सुख न दुख। मोक्ष, निर्वाण कवल्य सब परमानन्द की सुख-दुख रहित पूणत्व की एक परिस्थिति कल्पित की गई है। उस स्थिति परिस्थिति म मोक्ष की इच्छा की निर्वाण की कामना की कैवल्य की अकाक्षा की भी समाप्ति हो जाती है। जब मानव अपने जीवन म इस स्थिति को पहुच जाता है तब सनातनी इसे मोक्ष बौद्ध निर्वाण और जन कवल्य प्राप्ति की सज्ञा देते हैं। इस कथित स्थिति के अलावा चाह स्वग हो चाहे और वसा ही कुछ और सुख-दुख जीवन मरण, आवागमन स इसान का पिण्ड नहीं छूटता। ऐसा शास्त्रों का कथन है। जहा सुख है वहाँ दुख है जहाँ जीवन है, वहाँ मृत्यु है, जहाँ स्वग है वहाँ नरक भी है। स्वग के देवी-देवता इच्छा मुक्त कल्पित नही किये गये। ईर्षा द्वेष भय सब उनके जीवन म हैं। राक्षसो स प्रताडित उनका जीवन कल्पित किया गया है। सार कथन का तात्पय इतना ही है कि जहाँ द्वन्द्व की परिस्थिति है चाह वह

कितनी ही सुखमय क्यो न हो, वहाँ सुख के साथ दुख, कम—अधिक मात्रा मे पहले पीछे लगा हुआ ही है।'

"आप स्वग को मानती हैं ?" समूह मे से एक ने प्रश्न किया। रतिप्रिया बोली 'मैं इसे काल्पनिक अस्तित्व मानती हूँ। धम से, धार्मिक जीवन से, धार्मिक दिनचर्या से कल्पित स्वग मिले या न मिले यह विवादात्मक, विवादग्र हो सकता है परन्तु इसम कोई शक नही कि धार्मिक दिनचर्या से इसी अपने ससार मे अपने घर म स्वास्थ्यमयी, सुखमयी शान्तिमयी स्थिति अवश्य स्थापित हो जाती है। इस दृष्टिकोण से धम धार्मिक दिनचर्या चाहे मनीषियोका बुद्धिमाना का एक सामाजिक सिद्धात ही सही उसस व्यक्ति और समाजका हित ही होता है।"

रतिप्रिया कुछ क्षण के लिए चुप हो गई। शायद, उसके मस्तिष्क मे विचार आया कि वह अपने मुख्य विषय स भटक गयी है। अपने वक्तव्य क सूत्र की स्मृति म उसने कुछ क्षण लिये। सूत्र को पकडते हुए उसने कहा—

"विशिष्ट काम को साधारण काम म बहुत बार चर्चा द्वारा पठन द्वारा कलामय चित्र दशन द्वारा शयन-मन्दिर म परिवर्तित किया जा सकता है। परन्तु यह सब नारी की अपनी विशिष्ट कला पर आश्रित है। पति के, पुरुष के मन और मस्तिष्क की तरफ, ऐसी परिस्थिति म, सदव ध्यान रखना चाहिए। अपने मे उसकी दिलचस्पी का खोना अपने को खोना है। बहुत महत्व की बात है जो मैं अब आगे कहती हूँ। पुरुष अपनी शौयमयी प्राकतिक प्रवत्ति के कारण नारी को अपनी काम तप्ति के पात्र अथवा भाजन को, एक शिकार की तरह दबोच कर कभी कभी वश मे करक अपनी तप्ति करता है। उसकी इस प्रक्रिया म नारी दन्त नख क्षतो से प्राय पीडित भी हो जाती है। परन्तु पुरुष की उत्तेजना के इन क्षणो म ही वास्तविक रमणी की परीक्षा होती है। यदि सहवास के इन क्षणो म वह पुरुष को विजयी होने का अवसर देती है तो वह स्वत ही शिथिल होकर अपनी उस प्रेयसी का दास बन जाता है।

बहिनो ! याद रखो कि सव-समर्पण देकर ही सव-समपण प्राप्त किया जा सकता है। नारी का आशिक समपण उसके स्वय के लिये

घातक है। अश देकर कोई कहीं पूण प्राप्त नहीं कर सकता। शयन-मंदिर मे काम क्रीडा के क्षेत्र में तो, कभी नहीं।"

कुछ क्षण अपने विचारो को एकत्रित कर रतिप्रिया ने पुन कहना शुरू किया—

"आप कहेंगी कि इस पर भी यदि अपने पुरुष पर नियन्त्रण न पाया जाय फिर? मेरा कथन है कि, कहीं न कहीं आपने गलती की है। आपने अपने पुरुष को पढा नहीं है। पढा है तो उसकी इच्छाओ से, समस्याओ से सहयोग नहीं किया है। शयन मंदिर म पुरुष से दूरी अपने जीवन में पारस्पारिक दूरी का आमन्त्रण है। अनेक बार तो नारी को स्वय प्रवर्तक बनने की आवश्यकता हो जाती है। यह वह स्थिति होती है जब पुरुष का मन उसकी इच्छाए और कहीं उलझी हुई हो। शरीर में अनेक काम क्षेत्र हैं '

'जस ?"

'जघा, नितम्ब, वक्ष, ग्रीवा आदि-आदि। क्या कभी अपन इनके स्पश की स्वतन्त्रता दी है? जब पिता अपनी पुत्री को काम के लिए उसके वर को देता है तो सभी प्रकार के स्पश लेन देन मे लज्जा क्या? धर्म-सम्मत विवाह, समाज सम्मत है तो फिर झिझक क्या? दाम्पत्य जीवन मे तो पति पत्नी को घर म, घर से बाहर कहीं भी चाहे जब जाने की स्वतन्त्रता है। एक रमणी को एक कामिनी को, एक पत्नी को, एक प्रेमिका को अपने-अपने पुरुष के साथ सदव, नित्यप्रति नई-नवेली दुल्हन जसा व्यवहार करना आवश्यक है तभी वह अपने पुरुष को बँधा हुआ अपने पास रख सकती है।'

'और इसके उपरान्त भी दाम्पत्य जीवन मे सफलता न मिले ?'

'फिर समस्या को धय और बुद्धिमानी स सुलझाना पडेगा। आपने महाकवि कालीदास की शकुन्तला को पढा होगा। यदि नहीं पढा तो आपको पढ़ना चाहिये। उसम ऋषि कण्व अपने पति के घर प्रथम बार जा रही शकुन्तला का शिक्षा देते हैं, कि पुत्री 'बडो का सम्मान, दास-दासियो के साथ मद् व्यवहार और अपनी सौतो के साथ प्रम और उदारता का व्यवहार करना।' पुरुष के लिये बहु विवाह, परस्त्रीगमन, वश्यागमन,

शराब पान कभी-कभी परिस्थिति वश और कभी कुसगवश भी हो जाता है। मूल कारण, विशिष्ट परिस्थिति को समझ कर ऐसे समय में जो नारी उसकी रोक के उपाय करती है वही अच्छी गहणी समझी जाती है। कुछ क्षमा, कुछ त्याग ऐसे अवसर पर अनुकूल असर करता है। लडने-झगडने से स्थिति परिस्थिति बद से बदतर होने की सभावना अधिक है।

बहिनो! प्रकृति मे जस सर्दी, गर्मी आँधी, उमस वर्षा वसन्त सब आते हैं वस ही सामाजिक जीवन म भी उनका आवागमन है। व्यक्ति के जीवन म भी। प्रकृति का, प्रकृति के जीवन का कोई अस्तित्व सुख-दु ख स मुक्त नही है। फिर भी प्रकृति प्रकृति है। जीवन जीवन है। दुख के अस्तित्व को स्वाभाविक समझत हुए यदि जीवन म उसका सामना किया जाय तो जीवन कभी टूटता नही। अपना समय भोग कर जस सब चले जात हैं, समाप्त हो जात हैं वसे ही दु ख का भी अन्त है। गहरी घोर काली रात के बाद ही आशा भरी सुखमयी उषा किरण के, प्रकाश के, दशन होते हैं। पतझड के बाद ही वसन्त प्रकृति के जीवन मे अवतरित होता है। व्यक्ति का जीवन सामाजिक जीवन भी प्रकृति के जीवन से भिन्न नही। उस पर भी निरन्तर सतत परिवतन का नियम लागू है। इसीलिये जीवन अपने आपमे महत्वपूण है। जीवन म ही व्यक्ति लघु से महान बनता है गरीब से अमीर बनता है चरित्रहीन से चरित्रवान होता है मूख से बुद्धिमान और अधम से सन्त और साधु बन जाता है। वांछित दिशा म परिवतन का सुयोग अवसर मात्र हमारे इस जीवन को ही महत्ता है। इसीलिए निराशा, उसकी प्रेरक परिस्थितियाँ दुख, कष्ट, चिन्ता आदि सब सुखद परिवतन की द्योतक हैं आशामय जीवन और उज्ज्वल भविष्य की पूव सूचनाए हैं। इसीलिये हमारे ऋषि कह गये हैं कि सुख-दुख को विजय-पराजय को, मान-अपमान को जीवन मे समभाव से स्वीकार करना चाहिए। वे जानते थे कि ये सब जीवन की पटकथा के गतिशील परिवतनशील दृश्य हैं।

और परिवतन? व्यक्ति के जीवन में, सामाजिक जीवन में, *स्वस्थ सुन्दर परिवतन लाने का श्रेय एकमात्र नारी को ही प्राप्त हो* सकता है। माँ बहिन दादी, नानी, धाय आदि ही वे मूल शक्तियाँ हैं

जो व्यक्ति को उसके शशव मे कैशोय मे, उसके जीवन को निश्चित दिशा देती हैं। यौवन मे वही भार पत्नी के कधो पर आ जाता है। परिस्थितिया स भय खाकर यदि य ही अपने को अशक्त समझ कर विचलित हो जायेंगी तो समाज, जाति, देश का सौभाग्य ही खतरे में पड जायगा।

"बहुत अच्छा उदाहरण याद आ गया। जब स्वग मे देव महिषासुर की ज्यादतिया स, उसके जुल्मा से तग आ गये, आतकित होकर निराश हो गये, तब, उन्होने माँ दुर्गा का आह्वान किया। सबने अपने शस्त्र उसके सुपुर्द कर दिए। सिंहवाहिनी माँ दुर्गा न महिषासुर का दमन कर उसका वध किया। यह आख्यान प्रतीकात्मक सही, परन्तु मूल सत्य स, शक्ति के वास्तविक सिद्धात से हीन नहीं है। भारतीय पौराणिक युग के ऋषियो की यह कला थी कि उन्होंने कहानियो के सत्य को रूपको म सुस्थापित कर ससार को अपने देश को अमर साहित्य दिया। उनके चिन्तन को आज भी कोई चुनौती नही दे सकता। आज के युग मे भी उनकी कला शक्ति अपराजेय है, अनुकरणशील है। सिंह पौरुष के शौय का प्रतीक है, महिषासुर समस्त कुरीतियों का, दुर्भावनाओ का, उत्थान और सुख मे बाधक प्रतिगामी शक्तियो का प्रतीक है। उसके वध से पौराणिक कथाकार इस सत्य को उजागर करने की चेष्टा करता है कि नारी का रमणी रूप ही वह रूप है जो पुरुष सिंह को अपन वाहन के रूप म नियत्रित करत उसम उत्पन्न उसकी समस्त हीनताओ को सदव के लिए दूर करने म, समाप्त करने म समथ है। इसीलिए दुर्गा रमणी रूप म सिंह पर बठी है। वह काम रूपा है। उसके हाथो के शस्त्र उसके काम शरो की कुसुम शरा की, अभिव्यजना है जिनसे कसी भी दुष्प्रवत्तियाँ उन्मूलित हुए बिना नहीं रह सकती। इसी तरह सागर मन्थन के बाद अमृत घटक प्राप्त होने पर मोहिनी अवतार की कथा है जिसम राक्षसो को अमत पान से वचित रखा गया था। देव बुद्धिमान थे और राक्षस बली। एक प्रगतिशील शक्तियो के प्रतीक है और दूसरे प्रतिगामी शक्तियों के मोहिनी रूप, कामायिनी—काम की पुत्री—कामिनी का प्रतीक है। अपने रूप और

यौवन की मोहिनी शक्ति से उसने देवताओं की ईच्छा को पूरित किया व उनके श्रम को सफल बनाया। श्वत कमल पर बैठी हुई, श्वेत स्वच्छ वस्त्रो से आवत्त, चद्रवदनी महाश्वता देवी सरस्वती भी इसी काम-रूपा कला की अधिष्ठात्री है जिसके सौं य और कला के आग, जिसकी सुप्रभा के समक्ष त्रिदेव ब्रह्मा विष्णु महेश जम जीवन और मत्यु के प्रतीक प्राथना म नतमस्तक थे। मेरे सारे कथन का तात्पय यह है कि अपनी काम शक्ति से अपन पुरुषा को नियत्रित करने का अधिकार प्रत्येक नारी को है। यह अधिकार धम सम्मत और स्वाभाविक है। इसकी अ यवहृति समय पर इसकी व्यवहृति मे सकोच नारी का कुप्रवत्तियों का आमत्रण व उनके आगे अपना आत्म समपण है।"

क्षण भर रुककर बिना किसी प्रश्न की प्रतीक्षा किए रतिप्रिया ने कहा—

क्या आपने पुरुष को अपने पुरुष को समझने की चेष्टा की है? क्या आपने कभी अपने मोहिनी रूप का उपयोग किया है? क्या सब समर्पित होकर सब समपण प्राप्त किया है क्या देवी सरस्वती की तरह सज कर अपने पुरुष के काम को ललित कलाओ की ओर प्रेरित किया है? क्या उसके दोषो का क्षमा कर उससे आत्मीयता स्थापित करने की चेष्टा की है? और यदि नही तो बहिनो! एक पुरुष के परस्त्रीगामी बनन की अनेक घटनाओ मे उसकी स्त्री का भी बहुत अशा मे, अपरोक्ष रूप स ही सही हाथ होता है। क्या घटाआ स घिरे चाँद को देखने की सबकी इच्छा नही होती है? क्या रुचिपूण सुदर वेश लुभावना नही प्रतीत होता? क्या कचुकी की बधनी कुछ खुली रह जाने से वक्ष की उसके उरोजो की शोभा, उनकी कमनीयता कम हो जाती है? क्या झीने वस्त्रा म स झलकता नारी का सौदय पुरुष के लिए प्रेरणास्पद नही होता? और यदि यह सब नही होता तो पुरुष कलाकार ललित कलाओ के पुरुष पुजारी स्वय अपनी कविताओ मे अपने गीतो मे अपन साहित्य म अपन सगीत म अपने स्थापत्य म, अपनी मूर्तियो म इस महासत्य का उद्घाटन नहीं करते। पुरुष की इच्छा उसकी हार्दिक अभिलाषा, उसकी कामनाएँ सब कला के इन

विभिन्न माध्यमो से बखूबी जानी जा सकती है।'

इतना कह कर रतिप्रिया चुप हो गई। अपने वक्तव्य की समाप्ति का संकेत उसने अपने दोनो हाथ जोडकर उपस्थित समूह को दे दिया। आसीन समूह म हलचल प्रारभ हो गई। कुछ महिलाओ ने रतिप्रिया को नजदीक आकर घर लिया। कुछ उसके स्वागत मे व्यस्त हो गइ। क्षणो मे चाय, खान पान आदि का प्रब ध हो गया। सपन्न परिवारो का यह समाज था। रतिप्रिया मोटर मे बठी तो उसने देखा कि अनक उपहार उसम उसक साथ थे। पारस्परिक घनिष्ट अभिवादन के बाद उसने इस समाज स इस मोटर क पास ही छुट्टी ली।

रतिप्रिया का जीवन क्रम पिछले कुछ वर्षों से अबाध गति से चल रहा था। सम्भ्रान्त गृहस्थों म जो शिक्षण का पेशा उसने अख्तियार किया था उससे उस काफी अच्छी आमदनी हो जाया करती थी। अजय का आवास निवास भी बीच बीच के कुछ समय को छोड कर इसी के घर म था। कुछ दिन मेहमान रहने के बाद उसने शनै शनै घर की कुछ जिम्मेवारियाँ भी अपने ऊपर ले ली थी। रतिप्रिया अपनी ओर से उस कुछ भी लाने के लिए नही कहती थी। कुछ उपहारा से शुरू करके उसने घर की आवश्यक सामग्री की खरीद म हाथ बटाना शुरू कर दिया था। अजय की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। परन्तु वह फिजूल खर्ची नही था। सादा जीवन सादा रहन-सहन ही उस प्रिय था। रतिप्रिया की जीवनी से, उसके स्वभाव से, उसकी आदत मेल खाती थी। साहित्य चर्चा व कला शास्त्र के विनोद से दोनो एक-दूसरे के काफी नजदीक आ गए थे। एक घर मे एक साथ रहत हुए भी दोनो व्यक्तिगत रूप स अपना-अपना एकाकी जीवन ही जीते थे।

रतिप्रिया के घर मे अजय के अलावा उसकी तथाकथित माँ व उसका कुत्ता जानी और थ। दिन म अनेक बार अनक पुरुष गोष्ठी के बहाने आ जाया करते थे। परन्तु उनके आवागमन से रतिप्रिया की दिनचर्या म कोई बाधा नही आती थी। घर म उपस्थित रहती तो वह अवश्य आगन्तुको के विचार विमश मे भाग लेती और उनकी उचित आवभगत भी करती। उसका अपना कायक्रम निश्चित था। वक्त बेवक्त असमय मे किसी के आने पर वह क्षणिक औपचारिकता बरतने के बाद अपने काय म व्यस्त हो जाती।

सुबह चार पाँच बजे के बीच उठना उसकी आदत हो गई थी। अपने नित्य नमित्तिक कार्यों से निबट कर जिनमे स्नान पूजा, अध्ययन शामिल थे वह नियमित रूप से सरस्वती के मंदिर दशन करने जाती और वहाँ से आने के बाद ही उसका चाय नाश्ता प्रारंभ होता।

उसके छोटे से घर मे रसोई स्नानघर, सामान घर आदि के अलावा चार कमरे और थे। दो नीचे और दो ऊपर की मंजिल के इन कमरो म एक ऊपर का और एक नीचे का कमरा अपेक्षाकृत अन्य कमरा से बडा था। अजय और अन्य आगन्तुको के लिए ऊपर का कमरा ही सज्जित किया हुआ था। इसी कमरे म वह अजय और अन्य आगुन्तको के साथ बठकर बातचीत व विचार विमश किया करती थी। अन्य कमरे उसके व्यक्तिगत उपयोग के लिय थे। नीचे के एक छोटे कमरे मे अवश्य उसकी माँ का आवास व नियन्त्रण था। उसके साथ के बडे कमरे म उसने अपन सगीत अध्ययन व पूजा की व्यवस्था कर रखी थी। यह कमरा भी सुसज्जित व पूण व्यवस्थित था। बहुप्रयोजनशील होते हुए भी वस्तुओ का अवांछित एकत्रीकरण इसमे नजर नहीं आता था। सगीत के साज अध्ययन की पुस्तकें, पूजा के उपकरण सब अलग अलग अपनी-अपनी सीमाओ म व्यवस्थित थे। उसके अपने आकार के दो निमल दपण दीवारो म आमने सामने सजे थे। नटराज व सरस्वती की दो मूर्तियाँ कमरे के कोनों मे रखी दो उच्च पीठो पर विराजमान थी। इन मूर्तियो के आगे ही पीठ पर दीप पुष्प गन्ध की व्यवस्था की हुई थी। नटराज प्रकृति के निरन्तर नाट्य की मुद्रा मे शोभायमान थे। इस प्रतीकात्मक कला मूर्ति मे प्रकृति की निरन्तर प्रगतिशीलता का परिचय उसके गत्यात्मक सचलन व चेष्टाओ स रूपायित किया गया था। जसे सारा विश्व एक गति में, एक लय मे, एक अनन्त पथ की ओर अग्रसर हो रहा है। सरस्वती की शान्त भव्य सौन्दयमयी प्रतिमा वीणा, पुस्तक मालिका अपने हाथों मे धारण किये अपने आराधको को एक हाथ से अभय का वरदान देती हुई श्वेत कमल पर आसीन स्थापित थी। इस मूर्ति म स्थापित रूपको से यह प्रेरणा दी गई थी कि मानव, एक सामाजिक प्राणी, ध्यान अध्ययन और पूजा से प्रेरित सगीत से सब स्वच्छ होकर, **सर्व स्वच्छ रह**

होश नही आता। फिर जब सब कुछ चला जाता है सिर पर हाथ देकर रोते हैं।'

रतिप्रिया इस औरत की बात सुनकर सब परिस्थिति समझ गई। और भी उसने बहुत कुछ कहा मगर रतिप्रिया ने उसके सारे कथन को न तो सुना और न उस पर विचार ही किया। कुछ क्षण के लिए उसका मस्तिष्क जरूर चोरी की घटना के सदर्भ म उधेडबुन म लगा रहा, मगर शीघ्र ही वह आश्वस्त सी ताला खोलकर घर के अन्दर चली गयी। घर म कही भी वस्तुओ का बिखराव उसे नजर नही आया। ऊपर गई तो वहां भी सब सलामत था। जमी व्यवस्था प्रतिदिन थी वसी ही आज थी। सुनी घटना की प्रगति की प्रतीक्षा मे वह इस कमरे के गद्दे पर तकिये का सहारा लेकर बठ गई। उसका मन और मस्तिष्क दोनो कहते थे कि शीघ्र ही कोई-न कोई अवश्य सन्देश लेकर आयेगा।

और वही हुआ। कुछ ही देर मे उसकी माँ और अजय बाबू दोनो ही घर लौट आये। आते ही वह दोनो ऊपर गय। उन्होंने देखा कि रतिप्रिया पूर्ण आश्वस्त तकिये के सहारे बैठी है। उसके चेहरे पर वही स्मिति और होंठो पर मधुर मुस्कान थी। दोनो आगन्तुको क चेहरे उदास और गभीर थे। माँ का कुछ अधिक। उसकी आँखो म बार-बार आँसू उमड आते थ। वह कुछ भी कहने म असमथ थी। पास आकर जमीन पर वह आहत सी बठ गई। वाणी उसकी बन्द थी। शब्द उसक मुह से निकल नही रहे थे। अजय भी चुपचाप आकर बैठ गया था। उसने भी घटना का सिलसिला आते ही छेडा नही। क्षण दो क्षण मे ही उसकी मा न रतिप्रिया के पाँव पकड लिए और सिसकियां भर भर वह रोने लगी। रतिप्रिया को उसकी आँखो मे उसक चहरे पर उसकी निपट घोर दीनता के दर्शन हुए। उसन महसूस किया कि उसके पावो पर माँ के हाथो की पकड प्रतिक्षण अधिक मजबूत हुई जा रही है। अजय यह सब दखता रहा। आखिर रतिप्रिया ने ही मौन भग किया। अपनी माँ क हाथो को अपने पाँवो से दूर करते हुए उसने पूछा—

आखिर बात क्या है?"

मेरा मुह उसने काला कर दिया, बेटी! अभी दो तीन दिन से

ही वह यहाँ आया हुआ था। पुलिस ने उस पकड लिया है। न जाने अब उसके साथ क्या करेगी। इतने दिन बाहर था, सोचती थी कि कहीं मजदूरी लग गया होगा। न जान उसने यह कहाँ से सीख लिया। सामान बेचते हुए को पुलिस ने पकडा है।"

क्या सामान ?'

'अपन यही का था। कहते हैं सब पर तुम्हारा नाम लिखा हुआ है।'

रतिप्रिया न कुछ क्षण सोचा। उस अन्दाजा हो गया कि क्या सामान जा सकता है। वे सब नीचे गय। रतिप्रिया न नीच के कमरे मे जाकर देखा तो उसकी व्यवस्था मे उस कही बिखराव नजर नही आया। खूटी स चाबी उतारकर अलमारी खोली तो उपहार म आये कुछ चादी के बतन गायब थ। जिस डिबिया म उसकी एक अँगूठी और लाकट के साथ एक स्वण जजीर थी वह भी उस नजर नही आई।

कितना का गया है बेटी ?"

'मेरा खरीदा हुआ तो था नही माँ।'

मैं सब भर दूगी। मजदूरी करके सब उतार दूगी। तू उसे छुडा देना बेटी!

तू क्यो चिता करती है माँ ? तुमन तो उसे दिया नही। वह कोई गर तो नही है। जरूरत हो गई होगी। अपना समझ कर ले गया। और तो किसी का नही ले गया। तुम चिता न करो। कहाँ है वह ?

'पुलिस क कब्ज मे ?'

और माल !"

वह भी।

क्या करेंगे उसका ?"

'बयान लिए होगे। यहाँ लाने का कहत थे।' वाणी अजय की थी। रतिप्रिया पुन अलमारी बन्द करक ऊपर के कमर की ओर चल दी। घटना की प्रतिक्रिया का कोई विशेष प्रभाव उस पर नजर नही आता था। ऊपर पहुँच कर उसन माँ को चाय बनाने के लिये कहा। चाय आई उसके पहले ही पुलिस वाले एक सोलह सतरह वष के किशोर को लेकर

उसके घर पर आये । उसने सब को ऊपर के कमरे म आने का आग्रह किया । बठ तब तक चाय भी आ गई । सक्षम अधिकारी न रतिप्रिया से अपने घर का अन्य सामान सँभालने व बयान देने के लिए कहा । वह बोली—

जनाब ! आप नाहक परेशान हो रहे हैं । पहले चाय नोश फर माइये । आपने भी कह दिया । मैं बहुत कुछ सुन चुकी हूँ । पर मुझे ता सब मालूम है पहने म ही सब मालूम था । और यह कहते हुए उसने सब क लिये चाय का प्यालियाँ पूरित कर दी । आगन्तुका व अजय को देने के बाद उसने किशोर की ओर भी प्याली भर कर बढ़ा दी जिस उसने पुलिस अधिकारी का सकेत पाकर पकड़ लिया । माँ दूर दरवाजे के बाहर खडी देखती-सुनती रही । चायपान के समापन के बाद पुलिस अधिकारी ने पुन कहा—

हाँ तो आप अपना अन्य सामान देख लीजिये जिसस रपट लिखी जा सके ।

मगर किसलिए ?"

इसने चोरी जो की है ।

कौन कहता है ?

'यह स्वय । यह आपके माल को एक दुकान पर बेच रहा था । सब पर आपका नाम भी लिखा है । क्या यह सब सामान आपका नही है ?'

निश्चय ही मेरा है ।

फिर ?

यह सब ता इस मैंने दिया था । क्या बोलता क्यो नहीं है ? '

किशोर चुप रहा । पुलिस का आतक उस पर छाया हुआ था ।

क्यो वे ? क्या बात थी ? क्या कहा था तूने ? प्रश्न पुलिस अधिकारी का था । रतिप्रिया बीच म ही बाल पडी—

अफसर साहब ! इसने झूठ बोला होगा । पर मैं झूठ नही बालती । सामान मरा है मैंने ही इस दिया था । यह इस बेच सकता था । यदि किसी क घर म नकद न हो ता फिजूल का सामान ही तो पहले बेचा जाता है ।

'एक मासूम बच्चे की माफत ? बात समझ म नही आती ।'

"समझ म आनी चाहिये साहब ! इसस दाम ही तो कम आते । समाज के कथित इज्जतदारो का सामान इसी तरह कम कीमत पर बिकता है। अपनी इज्जत क कारण वे अपना सामान कभी बेचने नही जाते । दूसरो की माफत टाहर भीतर य सौदे त होत हैं । पाँच सौ स कम मे इन्हें न बेचना दा मैंने इस कह दिया था।

'परन्तु, इसने यह कहा क्या नही ?'

'पुलिस का रोब आप कम समझते हैं ? वह तो सब पर हावी होता है। फिर, यह ता एक बच्चा है। देखते नही कि मैं भा सारी बात आश्वस्त होकर कह नही सकती। अजय बाबू जस विद्वान और धीर गभीर आदमी भी चुप हैं। आकस्मिक और अनहोनी परिस्थितियो म बडो-बडा की हालत खराब हो जाती है। आतक मे किसी की बुद्धि ठिकाने पर नही रहती। इसकी हालत तो और भी अधिक खराब है।'

"आप इसलिए तो ऐसा नही कहती कि रपट लिखाने से आपकी मुसीबत बढ जायगी ? थाना काट, कचहरी मे चक्कर काटने की आशका से अप '

'ऐसी कोई बात नहीं है जनाब !

'आपने हमारा सारा मुकद्दमा ही ढर कर दिया।

यह कोई मुकद्दमा था ही नही जनाब ! आप इस और इस सामान को यही छोड दीजिये। बच्चे की थोडी सी मूर्खता क कारण आपको कष्ट हुआ उसके लिए हम सब क्षमाप्रार्थी हैं। एक कप चाय और चलेगी ?'

'नहा। धन्यवाद। —इतना कह पुलिस का सक्षम अधिकारी उठ खडा हुआ। उसके साथी भी उठ खडे हुए। शायद जब तक कोई कागज नही बने थे इसलिय पुलिस की तफ्तीश की कोई आग आवश्यकता नही थी। किशोर और माल को वही छोड पुलिस वाल चले गए। उनके चले जाने क बाद रतिप्रिया न घर का दरवाजा भीतर स बन्द कर लेने को अपनी माँ को आदेश दिया। वह पुलिस कमचारियो को दरवाजे तक छोड वापस ऊपर चली गई थी। माँ अपने बेटे को साथ लेकर आई तब वह अजय से कह रही थी, 'चलो यह भी अच्छा हुआ।

"पर आपने झूठ बोला।

"हाँ।"

"क्या?"

'इसलिए कि वह झूठ सत्य से बेहतर था।'

यह कैसे?"

"इसलिये कि अपने झूठ मे मैंने अपनी कोई स्वार्थ सिद्धि नही करनी चाही। जिस झूठ से दूसरे का उपकार हो, किसी अन्य की हानि न हो, किसी अपने स्वार्थ के लिए न हो, वह झूठ भी सत्य से अच्छा होता है। अजय बाबू! झूठ सत्य भी समाज मे प्रकृति के द्वन्द्व रोशनी और अंधेरे की तरह दो आवश्यक स्थितियाँ हैं। न अंधेरा खराब है न प्रकाश अच्छा। वही बात झूठ और सत्य के सम्बन्ध म भी सत्य है। जिस सत्य से तबाही मचे, किसी के जीवन का विनाश हो जो परस्पर में दुर्भावनाएँ फैलाए वह सत्य झूठ से भी बदतर है। लकीर के फकीर की मैं मोहताज नही हूँ।'

"इस सिद्धांत को कहाँ तक अपनाया जा सकता है?'

"जहाँ तक इसकी आवश्यकता हो?"

'क्या नैतिकता और धर्म इसे स्वीकार करेंगे?'

'छोडो इस बात को, अजय बाबू! धर्म और नैतिकता के अप्राकृतिक व्यवहार से मानव कितना गिरा है कितना और कैसे अपने सुख और प्रगति से वंचित रखा गया है इसका संसार का इतिहास साक्षी है। दुनिया के सब द्वन्द्व समाज के सारे द्वन्द्व सब सापेक्षिक हैं। सब एक दूसरे के पूरक हैं। परन्तु अपने आप म सब नष्टप्राय सारे द्वन्द्व जीवन के क्रम को चाहे वह प्राकृतिक हो चाहे मानव प्रेरित आगे बढाने के लिए हैं। आकाश आँधी बिजली तूफान वर्षा के आगमन से नष्ट नही होता, बल्कि और अधिक साफ होता है। नदी का पानी भयंकर बाढ की गन्दगी के बाद निर्मल हो जाता है। युद्ध की विभीषिका भी एक दिन शान्ति को जन्म देती है। सामाजिक जीवन के द्वन्द्वों को भी उनकी प्राकृतिक सापेक्षिकता में समझ कर जो व्यक्ति व्यवहार करता है उसके वास्तविक व्यक्तित्व के लिए वे घातक नहीं। विष खराब है, तेज धारदार चाकू का प्रयोग

खराब है। परन्तु ये दोनों चिकित्सक और शल्यकार के हाथ में वरदायक हैं। माँ अपने रोते हुए बच्चे को कहानी घड़ कर फुसलाती है उसके वांछित वादे पूरे करने को कह कर उसे चुप करती है। धर्मशास्त्रियों ने, दुनिया के मनीषियों ने किस्से-कहानियों से शास्त्र निर्मित कर दिए हैं, क्या यह सब झूठ है? आपकी दृष्टि में मैंने झूठ बोला पुलिस की दृष्टि में भी मैंने झूठ बोला, परन्तु अपनी दृष्टि में मैंने झूठ नहीं बोला। इस किशोर बालक का जीवन मुझे श्रेय था। इस मेरी माँ की खुशी मुझे श्रेय थी। मेरा हृदय, मेरा तन, मेरा मस्तिष्क उस झूठ से किंचिन्मात्र भी आज विकृत नहीं हुए हैं।"

इतना कहकर रतिप्रिया चुप हो गई। माँ और बच्चा पुनः रतिप्रिया के पाँवों से लिपट गये। कुछ क्षणों के विश्राम के बाद किशोर के मुँह से शब्द निकले, "आयन्दा कभी नहीं करूँगा।"

"अच्छी बात है पाँव तो छोड़ो।'

'मुझे माफ करो दीदी।"

माफ कर दिया तो।'

उसने फिर कहा 'आयन्दा ऐसा काम कभी नहीं करूँगा।

बहुत अच्छी बात है। तुम्हारे थोड़े-से अपराध से देखो तुम्हारी माँ को कितना कष्ट और दुख हुआ है। तुम्हीं तो उसके जीवन के सहारे हो। तुम्हारे कारण उसे दुख हो उससे अधिक बुरी बात और कोई नहीं हो सकती है।'

'अब तुम इस घर में कभी पाँव नहीं रखोगे।' माँ ने चेतावनी देते हुए कहा।—'मगर' रतिप्रिया बोली 'क्यों नहीं? यह घर इसका है इसकी माँ का है बहिन का है। और कहाँ जायगा? और देख, भया! आयन्दा किसी की कोई चीज न उठाना। अपना वही होता है जो अपने परिश्रम से प्राप्त किया जाय। जीवन में गलतियाँ प्रत्येक से होती हैं। उनसे मायूस नहीं होना चाहिए। बड़े वे ही बनते हैं जो अपनी गलतियों से अच्छा बनने की कोशिश करते हैं। और अच्छा वही है जो दूसरों के काम आए। किसी पर भार न बने। समझे?'

"इसे सिर पर न चढ़ाओ, बेटी!'

"यह सिर पर चढ़ाना नहीं है, माँ ! अभी यह बच्चा है। शायद, तुमसे और अन्य सम्बन्धियों से इसे आज तक झिड़की ही मिली है। प्यार, मधुर वाणी क्या है, शायद, इसने आज तक उनका अनुभव ह नहीं किया होगा। और देख मुन्ना ! तू इन चीजों को बेचने क्यों गया था ? इनमें से कौन सी चीज तुम्हे सबसे अधिक पसन्द है ? बोलो ! बोलते ही वह इसी क्षण तेरी हो जायगी। और देख, आज से तू यहीं रहेगा। मेरे पास। कुछ पढ़ेगा लिखेगा। घर के काम में माँ की मदद करेगा। किताबें कपड़े, पैसे—सबका मैं इन्तजाम करूँगी कुछ न-कुछ तो कमी अभाव, सबको होते हैं भैया ! उनसे हार कर प्रलोभन में नहीं आना चाहिए। अच्छा वही है जो अच्छा सोचे, अच्छा करे। और यह कहते हुए उसने अपना हाथ उसके खुले सिर पर फेरना शुरू कर दिया। जुर्म का पाप का, अपराध का वातावरण ही उसके वक्तव्य से अब तक समाप्त हो चुका था। बच्चे ने पुलिस द्वारा लाए हुए सामान में से रतिप्रिया का एक फोटो उठा लिया। साथ ही वह रतिप्रिया के चेहरे की ओर देखने लगा। वह बोली—

'आज से यह तुम्हारा है। और कुछ ?

'बस !' साथ ही बालक के चेहरे पर प्रसन्नता की एक मुस्कराहट प्रस्फुटित हो गई जो सबके लिए आनन्ददायक थी।

"अरी घुघरुओं को अभी रहने दो। पावों को ठीक करो। 'ता' थेई' तत —इन तीन अक्षरों को ही सर्वप्रथम सीखना है। फिर वही बात! दाहिने पाँव को पूरा जमीन पर पटको तब ता होगा। तुम्हारी सहेली शोभा ठीक कर रही है। बाएँ पाँव को पूरा पटकने से थेई होगा। पर की एडी से हल्का आघात करने पर तत' की उत्पत्ति मानी गई है। जब इतना सीख लोगी तब आगे बताऊंगी कि क्या करना है। समझी "

बहिन जी ! यह तो मुझे हो गया। देखिए। ता थेई तत, ता, थेई तत् ।' दूसरी ने कहा। साथ ही पाँव से क्रिया की।

'ठीक है। देखो नृत्य हमेशा स्वर वाद्यों व ताल वाद्यों की सहायता से मनोहारी बनता है या बनाया जाता है। उनकी ध्वनि में मिल कर ता' में एक अजीब ओज आ जाता है। तब यही ता घ म सुनाई देगा। यह स्थिर ध्वनि वाला अक्षर है। अधिक आकर्षक अधिक प्रभावशाली।

'नृत्य में और अक्षर नहीं होते, बहिन जी ?"

'होते हैं पर वे सब इन्हीं तीन अक्षरों के प्रसार हैं। ता ताण्डव-स्वरूप का प्रतिनिधित्व करता है, यह पुरुषत्व प्रधान है। वीर उत्साह शृंगार रस के प्रदर्शन में इसकी प्रधानता हम देखेंगे।'

'और थेई !

लास्य नृत्य में इसकी प्रधानता हम देखने को मिलेगी। 'ता जम शिव स्वरूप है वैसे ही 'थेई' पार्वती स्वरूप है। एक नृत्य में पुरुषत्व का दूसरा नारीत्व का प्रतिनिधित्व करता है। पुरुष और प्रकृति पुरुष और नारी।— तत् पुरुष और प्रकृति की लीला का द्योतक है।

'यह क्स बहिन जी ?"

एक बात तुम्हे हमेशा याद रखनी चाहिए। सब ध्यान से सुनो। भारत एक धमप्राण देश है। इसकी कोई कला चाहे वह सगीत से सम्बधित हो, चाहे साहित्य स मूर्ति से हो चाहे स्थापत्य से, लौकिक हो चाहे अलौकिक सब धम से सम्बद्ध हैं। भारतीया के—प्राचीन भारतीयों क सारे धम उनकी दिनचर्या म प्रविष्ट कर दिये गये थे जिससे कोई भी यक्ति उनके चितन के लाभो स वचित न रहे। ऋषियों ने मनीषिया न इसीलिये एक भारतीय के जीवन को उस जीवन की दिनचर्या को धम का रूप दिया। जीवन को महत्त्व देते हुए उसकी साथकता को सब महत्त्व दत हुए ही उन्होने धम, अथ काम मोक्ष की प्राप्ति के उद्देश्यो की उत्पत्ति की।—इन चारो उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए ही उन्होने एक भारतीय क जीवन को चार अवस्थाओ म बाँटा।—ब्रह्मचय, गहस्थ वानप्रस्थ और स यास—ये ही वे अवस्थाएँ थी जिन्हे वे आश्रम के नाम स सबोधित करते थे। एक सौ वष के पूण जीवन को उन्होंने चार बराबर भागा म बाट दिया था सब धार्मिक, सब धम के लिए। इस तरह एक भारतीय का सारा जीवन ही धम है धममय है। जीवन से बाहर उनका धम नहीं है। इसीलिए भारतीय कलाएँ भी धममय हैं जीवनमय हैं। नृत्य म शिव, पावती, गणेश भारतीय पुरुष नारी और शिशु के प्रतीक हैं। धम अथ काम, मोक्ष सब जीवन के लिए साधन हैं अपने आप म साध्य नही। इनम स किसी को भी एक मात्र साध्य मान लेने स जीवन अजीवन हो जायगा। धम अथ काम मोक्ष के ये वर्णित उद्देश्य एक भारतीय सपूण व समग्र जीवन की सक्षिप्त परिभाषा है। आवश्यकता से अधिक न धम न अथ न काम न मोक्ष। सब एक महत्त्वपूण जीवन के लिए। सब उद्देश्यो म इतना सामजस्य कि किसी की अति क कारण जीवन अजीवन न बन।

जीवन अजीवन न बने। क्या मतलब ?'

हाँ श्रीमती प्रभा ! जीवन अजीवन न बने इसीलिए मेरे खयाल स मनीषियो ने सवत्र अति की वजना की है। ये ललित कलाएँ—नृत्य गान वादन चित्र मूर्ति कविता, साहित्य स्थापत्य आदि-आदि

सब उद्देश्यो की अति के प्रति रोक है। जीवन को, उसकी रसलीला को सुरक्षित रखने के लिए ही इनका निर्माण व विकास हुआ है। सारी ललित कलाएँ एक उत्साहित जीवन के लिए प्रक्रियाएँ हैं, प्रेरणाएँ हैं। इनके माध्यम से हम अतीत मे जी सकते हैं आगत का सुख भोग सकते हैं, अनागत म विचरण कर सकते हैं। भूत, वतमान, भविष्य—तीनो एक कलाकार की कला के एक साथ अवलम्ब हो सकते हैं। गत, आगत और अनागत जीवन से भिन्न हम अमर जीवन की कल्पना नही कर सकते। इसीलिये कला अमर है, कलाकार अमर है क्योकि उसम तीनो काला के उपयोग की अपनी कला के माध्यम स शक्ति ह। जीवन के सुख दुख उसका उत्थान-पतन उसकी आकाक्षाएँ आशाएँ प्रेरणाएँ सब एक कलाकार की कला के विषय हो सकते है। जब उसकी कला तीना कालों म जीवित रहने का उसे अहसास करा देती है वह कलाकार अमर हो जाता है। ऐसी अनुभूति मे उसके लिए जीवन ही जीवन रह जाता है, मत्यु का अहसास उसे नही होता। इस तरह जीवन का मात्र जीवन का वह स देहवाहक होता है। इसम अधिक इससे भिन्न अमरता को मैं नही समझ सकी हूँ, श्रीमती जी!"

कुछ क्षणो के लिए नत्यशाला मे शाति छा गई। उसे भग करते हुए नत्यार्थी एक तरुणी ने पूछा—

आप कह रही थी कि ता पुरुषत्व का और यई नारीत्व का प्रतिनिधित्व करते है और तत शिशु का। यह सब कसे? नत्य म यह सब कस व्यवहृत होगा, बहिन जी?"

नत्य क्या है?'

'एक कला है।'

'और कला क्या है?'

आप ही बताइये।

जीवन की अनुकृति! और आप पूछेंगी कि जीवन क्या है?"

'हाँ।'

ससार मे जो कुछ दृष्टिगोचर होता है वह जीवन है। प्रकृति मे पशुओ के पौधो के, पक्षियो के स्त्री-पुरुषो के बालको के जो व्यापार

व्यवहृत होते हैं वे सब जीवन हैं। आकाश पाताल पृथ्वी पर की समस्त हरक्तें जीवन हैं। सूय, चन्द्र तारे समुद्र तूफान की गतिशीलता जीवन से भिन्न नहीं। कली का खिलना, फूल बनना ग ध प्रसारित करना सब उसके जीवन क अग है। उसी प्रकार शिशु की चचलता, पुरुष का पौरुष, उसका बल साहस नारी की रमणीयता उसकी करुणा उसका स्नेह, प्यार आदि-आदि सब जीवन यापार की अनुभूत घटनाए है। जीवन का प्रकृति के सपूण जीवन का अग होने के नाते मानव को इतिहास से अपने गत का ज्ञान है आगत स सम्बद्ध होने के कारण यह वतमान स परिचित है मा मस्तिष्क और हृदय का धनी होने के कारण अनागत क लिए उसके स्वप्न हैं आशाएँ है आकाक्षाएँ हैं उद्देश्य हैं। कहने का तात्पय यह है कि प्रकृति का समस्त जीवन अपनी सम्पूणता म कला का विषय है। जो कला जितनी अधिक सूक्ष्म होगी उतना ही कम उसका भौतिक आधार होगा। जीवन की घटना विशषकर उसक मम का ज्ञान कराना उसकी अनुभूति देना ही हर ललित कला का उद्देश्य है। इसलिए जो कलाकार जितना अधिक जीवन का पारदर्शी होगा उतना ही अधिक उच्च स्तर वह अपनी कला म प्राप्त करेगा। उसके लिए आत्मपरक व वस्तुपरक दोनो होना आवश्यक है। वस्तु अथवा विषयपरकता स जहाँ उस वास्तविकता का यथाथ का ज्ञान होगा वहीं आत्मपरकता स अमूत इच्छाओं भावों व विचारो की गहराइयो को वह जान सकेगा। एक कलाकार के लिए आत्म निरीक्षण, आत्म विश्लेषण अ तदशन उतना ही जरूरी है जितना बाह्य ज्ञान। जो ज्ञान की सीमा स्तर वह प्राप्त करेगा उतनी ही उसी क अनुरूप उसकी कला परिष्कृत होगी। कला प्रदशन का विषय है बहिन जी। घटना का चाहे वह मानसिक हो चाहे भौतिक समुचित सप्रेषण ही कलाकार का ध्येय होता है। ज्ञान के अभाव म समुचित सप्रषण का आधार ही नहा बनता। समुचित सम्प्रेषण उस ज्ञान की व्यवहृति है जो एक कलाकार अपनी शाला म अपने अभ्यास कक्ष म प्रदशन क लिए प्राप्त करता है। इस सन्दभ मे ता थई तत क महत्त्व को जानने क लिए मानव जीवन क सभी पहलुओ से, पुरुष नारी और शिशु के सभी व्यापारो से उनके

पारस्परिक सम्बन्धो से, एक नत्यकार का—परिचित होना होगा। उनकी स्वाभाविक प्रवत्तियो से पूर्ण परिचय प्राप्त किए बिना पुरुष के शौय नारी की रमणीयता, शिशु की चचलता आदि आदि का शुद्ध और समुचित सप्रेषण करने म वह कभी समथ नही होगा। नृत्य के ये अक्षर वास्तव म मानव की अवस्थाओ के उनकी परिस्थितियो के, उनके स्वभाव के उनकी प्राकृतिक प्रेरणाओ के प्रतीक ह। नत्य म जहाँ जिस भाव की अभिव्यक्ति करनी होगी उसी के अनुरूप अनुकूल अक्षरा की व्यवहृति अधिक करनी होगी। और प्रकृति प्राकृतिक जीवन जहाँ भी वह है एक लयबद्ध सजन है कला भी एक लयबद्ध सृजन होगा।' इतना कहने के पश्चात रतिप्रिया चुप हो गई। कुछ क्षण के लिए कक्ष म मौन छा गया। रतिप्रिया ने अपने शिक्षणार्थियो के समक्ष अपने विचार इतनी सरलता से और सुगम भाषा म रखे कि उनके बोधगम्य होने म किसीको कोई कठिनता महसूस नही हुई। उसके शिक्षणार्थियो म सभी प्रकार की महिलाएँ व तरुणियाँ थी। किसी कला के आधारभूत सिद्धान्ता की यदि सहज व्याख्या की जाय तो उस कला को समझने व रसास्वादन करने की क्षमता का विकास सही रूप म हो सकता है इस तथ्य से रतिप्रिया सुपरिचित थी। इस प्रकार का सहज शिक्षण कलार्थी और कलाप्रेमी मे स्वाभाविक तौर से उस कला के मूल्याकन की सामर्थ्य उत्पन्न करता है। व्यक्ति की बुद्धि के विशेष स्तर पर पहुचने के बाद ही कला म अभिरुचि व कलात्मक जीवन म प्रविष्टि का योग सिद्ध होता है। मात्र ज्ञान, मात्र समझ कलात्मक जीवन की व्यवहृति व उसके प्रदशन के लिए पर्याप्त नही होते। जहाँ तक कला के ज्ञान और उसके मूल्याकन की सामर्थ्य का प्रश्न है एक कलाविद एव कलाप्रेमी स्वय प्रदशनकर्त्ता कलाकार से अधिक सूक्ष्म दृष्टि गहरी पहुच रख सकता है, परन्तु उसके लिए प्रदशन द्वारा वह सप्रेषण सभव नही होता जो एक कलाकार के जीवन का अंग है। कला द्वारा सप्रेषण की सफलता अभ्यास द्वारा ही सभव है।

रतिप्रिया द्वारा प्रवर्तित मौन को भग करते हुए एक रमणी ने प्रश्न किया, 'बहिन जी! क्या ता', थेई, तत के अलावा और अक्षर नत्य के बोलो म प्रयुक्त नही होते?

अवश्य आते हैं परन्तु व सब इन्ही अक्षरों के सहयोगी बनकर आते है। स्वर ताल भावो को एकप्राण बनाने की कलात्मक योजना मात्र नृत्य म ही प्रलक्षित है। सा, रे, ग, म, प, ध नी सा । सा से नी तक सात स्वरो की लहरी जस गान और तार वाद्यो का आधार है उसी प्रकार अपनी नागरी भाषा के क वग त वग, ट वग, प वग क कुछ अक्षर ताल वाद्यों क बोलो क आधार हैं। प्रकृति म गति है वह गति समय और काल स बाधित है। यही उसकी लय है। यदि यह नही होती तो सूय तारे ग्रह पृथ्वी चन्द्र कभी क परस्पर म टकरा कर नष्ट हो गए होत। प्रतिवष, क्रमबद्ध ऋतुओं का आवागमन होता ही नहीं। प्रतिवष प्रकृति सुन्दरी नया शृगार करती ही नही। लयबद्ध गति से ही पल-पल का परिवतन सम्भव हो सका है। प्रकृति जगत म सवत्र अपनी वाणी है अपने स्वर हैं। पशु-पक्षियो में बल्कि कीड कीटाणुओ तक म अपनी अपनी वाणी की मुखरता है। पेड पौधे, घास तक पवन के प्रवाह से प्रभावित होकर अपनी अपनी स्वर रचना करत हैं। सागर गजन करता है, बादल गजत हैं बिजली कडकती है। कला के आचार्यों ने इन सबकी भाषा और गति को अपने वाद्यो म उनकी ध्वनियो व गति के स्वरूपा मे सादृश्यता क आधार पर रूपायित कर दिया है। विभिन्न तालो व स्वरा म स्थापित प्राकृतिक गति व स्वरा के य रूपक—ये बोल —सहज भाव स प्रकृति सुन्दरी की अनन्त लीला का प्रतिनिधित्व करने मे समथ हैं। मानव द्वारा विरचित प्रत्यक कला का सर्वोच्च लक्ष्य सारे ससार को बल्कि सारे विश्व को एक रूप मे देखना व समझना है। यही अनुभूति मानव का मोक्ष है। प्रकृति के अमर जीवन के साथ मानव की एक कलाकार की सहकारिता एकात्मता—कला का परम लक्ष्य है। व्यक्ति अमर न सही, परन्तु जीवन अमर है। जीवन की अमर धारा मे प्रविष्टि, उसके साथ एकरूपता, एकात्मता उसका सहवास एक कलाकार को सावभौम जीवन का स्वरूप प्रदान करता है।—क्योंकि प्रकृति के जीवन म सवत्र सवकाल म मेल है एकरूपता है इसीलिए कला मे भी स्वर लय, भाव से एकरूपता, मेल अनिवाय है। कलाकार जब स्वय अपनी कला का रचनाकार बन जाता है, उस सवद्धि देने लगता है,

उसे सफलतापूर्वक अपने लक्ष्य तक पहुंचाने में समर्थ हो जाता है, उसका अस्तित्व उसकी स्थिति एक सृष्टिकर्ता की बन जाती है। दुनिया का कोई अस्तित्व, कोई हस्ती इससे अधिक नहीं बन सकती न उससे बड़ी शक्ति की कल्पना ही की जा सकती है।'

'क्या कला कला के लिए है ?'

'प्रथमतः कला मानव के लिए है, मानव कला के लिए नहीं है। जिस कला से मानव के चरम उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती जिस कला से कलाकार परम आनन्द की प्राप्ति नहीं कर सकता वह कला कला ही नहीं है। जिस कला के माध्यम से रोटी चलती है वह व्यापार है रोटी रोजी का साधन मात्र है। पर उसी के माध्यम से जब व्यक्ति कलाकार अपने व्यक्तित्व को उभारता है परिष्कृत करके एक महान लक्ष्य तक अपने को पहुंचाता है दूसरों को उस लक्ष्य की प्रेरणा देता है, तभी वह एक सच्चे कलाकार की श्रेणी में आता है। नृत्य में भी मात्र ता, थेई, तत', और उनके विस्तार को पांवों में ले आने से इस कला की सिद्धि प्राप्त नहीं होती। उसके लिए आवश्यक है कि कलाकार उनके महत्त्व को जाने। प्रयास से, साधना से उस परम लय, उस परम स्वर, उस परम सृजन की ओर अग्रसर हो।'

रतिप्रिया अपने इतने वक्तव्य के बाद पुनः चुप हो गई। कुछ ही क्षणों के विराम के बाद उपस्थिति में से ही प्रश्न हुआ—

क्या घुंघरुओं में ता थेई, तत् के स्वर निकलते हैं ?'

नहीं।'

फिर नृत्य के समय इन्हें पांवों में क्यों बांधा जाता है ?'

रंजन के लिए। सारी कृति को रसपूर्ण आनन्ददायक बनाने के लिए प्रकृति में पवन प्रवाहन से उसके वेग के अनुसार पेड़, पौधे पत्तियों से एक स्वर निकलता है जिसे हम छम छुन, छिन आदि ध्वनियों में महसूस करते हैं अथवा सुनते हैं। सभ्यता के साथ मानव ने धातु का आविष्कार किया। उसके फलस्वरूप पीतल और भरत अस्तित्व में आये। स्वर्ण, चांदी पीतल भरत आदि का उपयोग शुरू हुआ। प्रथमतः शृंगार में और बाद में कला में। पैंजनी, पायल के साथ घुंघरू अस्तित्व में

आया। जब शृगार व कला की माँग बढी तब घुघरू भी व्यवहृत होने लगे। इसके स्वर ने कलाकारो का ध्यान आकर्षित किया। प्रथमत लोक कला म इसका उपयोग होने लगा। छछि, छम, छछि छूम छूम, नन आदि लोक कला मे इसके बोल अथवा अक्षर बन गए। सगीतशास्त्रियो ने लाव नत्य के इन अक्षरो को स्वरो को ताल और स्वर वाद्यो से अपनी कला म सयोजित किया। नागरी भाषा क च' वग स छ और झ श द लकर उन्होने लाव नत्यकारो के लिए इनम न य के बोल बना दिए। सूक्ष्म और वहद ध्वनियो के लिए घुघरुओ के निर्माण आकार प्रकार म उन्होने परिवतन किये। इस उत्पत्ति के लिए गीतन और भरत के विभिन्न आकार प्रकार के घुघरुओ का प्रयोग होन लगा। कलाकार के लयबद्ध नियत्रित पदाघात स अब इनस विभिन्न रसों की उत्पत्ति की जाती है। स्वर और ताल वाद्यो का सहयोग पाकर घुघरू के स्वर कलाकार की कुशलता के अनुरूप अब सब रसो सब भावो की उत्पत्ति करने म समथ है।'

रतिप्रिया अभी क्षण भर क लिए चुप हुई थी कि एक महिला ने प्रश्न किया और ये मुद्राएँ ?"

अवयवो की साकेतिक भाषा का नाम ही तो मुद्रा है। कुछ सकेत निश्चित बन गए। निश्चित मुद्राए बन गयी। कुछ रूपको को निश्चित रूप और अथ दे दिया गया है। भावो का सप्रेषण तो सदव कलाकार की स्वय की क्षमता पर आश्रित है। जीवन और जीवनी का सपूण ज्ञान ही सूक्ष्म भावो, विचारो और इच्छाओ की ओर कलाकार का अग्रसर करेगा। एकात्मता और अभ्यास से सप्रेषण की सिद्धि प्राप्त होगी।'

जस ?' एक ने पूछा।

दडा मुश्किल प्रश्न है।

'फिर समझ म कस आयेगा बहिन जी ?"

"ठीक तो है।" दूसरी न कहा।

' तो आप उदाहरण चाहती हो ?'

"हा। पर शब्दो म नहीं।

"फिर ?"

"नृत्य म।'

'आह। अब समझी। खर कोई बात नही। घुघरुआ की वह जानी दना।' और इतना कह कर रतिप्रिया कुछ सोचने लगी। उसने दोना पावो मे घुघरू बाधे। खुली साडी के छोरा का कमर म बाधा। एक शिक्षार्थी युवती को नगमा शुरू करन के लिए कहा। एक दूसरी को तबले पर तीन ताल का ठका बाधने क लिए सकेत किया। स्वय ताली बजाकर एक स सोलह तक की गिनती की ओर ताल की गति का ताल कर निश्चित किया। फिर कुछ क्षण शात खडी होकर उसन कहना शुरू किया

मान लीजिए, यह व दावन है। राधा कृष्ण की तलाश म है। दो एक सखियाँ उमक साथ हैं। चारो ओर घन कुज है। छाटी छोटी सकीण वीथिकाए कहा-कही अनिश्चित पथा का आभास दनी है। उसका ख्याल है कि कृष्ण यही कही किसी कुज की ओर होगे। अब दखिये—

और इतना कहकर रतिप्रिया एक ध्यानस्थ विचार की मुद्रा म खडी हो गई। अनामिका इस समय उसके अधर के नीचे लगी थी। कुछ घुघरुआ की हल्की झकृति हुई। उसन अपनी सखि का सकेत स पास बुलाया। सकेत से ही पूछा, कृष्ण कहाँ हैं? सकत स ही उसन वशी और मुकुट की मुद्रा बना दी। सखि का भाव भी उसन दोना हाथ हिला कर व बाद म उन्ह अपन सर पर रख कर दर्शाया। उत्तर था, कृष्ण का पता नही। कुछ अन्तराल म उसकी मुख मुद्राओ म परिवतन हुआ। शायद, दूर म आत हुए वशी के स्वर उसक काना म पड गये थ। चिन्ता की मुद्रा समाप्त हुई। अब उसकी दृष्टि दूर एक कुज की ओर जा लगी। वशी का स्वर परिचित था। किसी को खाजन की मुद्रा म उसन अपनी दृष्टि और सर इधर-उधर घुमाया। आँखो के ऊपर अब हथेली का ललाट क सहार पडा था। कुछ निश्चिति के बाद उसन एक कुज की ओर अपन पाव बढ़ाय। धीर धीर हल्के पाव वह बढ़ी। अब मन्दगति उसक पावा म थी। कभी कभी चलत चलत वह रुक जाती अथवा जल्दी अग्रसर हो जाती। दृष्टि कुज पर थी। उसकी गति म चपलता व तीव्रता सहसा आ गयी। शायद, कृष्ण का पीताम्बर, उसकी माखो म दखन उस हो गये

थे। एकाएक मुह प्रसन्नता की मुद्राओ स प्रहसित हो उटा। गति मे एक-रूपता आ गयी। अब वह कल्पित कुज के पास पहुच गई।—वक्षो की टहनियो को अपने रास्ते और मुह स अलग किया। पर कृष्ण ? इधर-उधर दृष्टि दौडाई पर वे दिखाई नही दिए। आश्वस्त हो आहट की प्रतीक्षा करने लगी। अभी और बढने के लिए अनिश्चित थी कि कृष्ण न पीछे से आकर उसकी आखें बन्द कर दी। परिचित स्पश था। आंखो पर से हाथ हटाते ही क्षणएक तप्ति की मुद्रा का उसके चेहरे पर आभास दिखाई दिया। परन्तु तत्क्षण रूटने के भाव चेहरे पर आ गय। कृष्ण के सपक स अपन का दूर करत हुए वह एक ओर अलग खडी हो गई। अब दष्टि कृष्ण पर न होकर शून्य म एक कुज की ओर थी। *ज्योंही अब कृष्ण उसकी ओर अग्रसर होते वह दूर हट जाती।* —फिर कृष्ण का अनुनय, विनय क्षमा-याचना। अन्त म बाहु प्रलबन मिलन चुम्बन समपण।

इतना नाट्य करन के बाद रतिप्रिया न कहा—

'यह राधा का नत्य था। मुद्राओ से तो मात्र भाव प्रदशन किया गया था। कलाकार जितना ही अधिक अनुभवशील होगा उतनी ही उसकी भाव प्रदशन की क्षमता अधिक होगी। रही बात नत्य के अक्षरा की उसके शब्दो की। लास्य नृत्य होन के कारण इसमे थेई की प्रधानता थी। तत का भी उपयोग किया गया था, मगर, कम। सिफ वही जहाँ त्वरित गति की आवश्यकता थी। 'ता भी था। परन्तु वही जहाँ अग्रसर होन के लिए आश्रय की आवश्यकता थी। नारी को बढने के लिए, जीवन म अग्रसर होने के लिए पुरुष की उसके शौय की आवश्यकता हाती है। वस ही जस एक लता को वक्ष की। वह उसका स्थापन स्थान है। 'तत बालक की चचलता का द्योतक है। इसीलिए आग पीछे इसका 'थेइ क साथ उपयोग किया गया था। गति म नये भाव का स्फुरण विस्फाट तोडे' अथवा टुकडे स किया गया था। उसका सचार परन म दश्य था। उसकी निश्चिन्ति 'तिहाई म प्रलक्षित थी। सक्षेप मे इसी मूल सिद्धात को ध्यान मे रख कर अभ्यास करना चाहिए। जहाँ स्वर ताल और नृत्य के बोलो मे सामजस्य होगा, एकरूपता होगी, एक भाव

होगा वही विशिष्ट रस की उत्पत्ति होगी।—रस ही विशिष्ट आनन्द है। कलाकार जब अपनी कला म रम उत्पन्न करता है वह कर्तार है बहिनो! उसे ईश्वर की तरह अपनी सृष्टि उत्पन्न करने का रस प्राप्त होता है। यही उसकी काम तृप्ति है।"

रतिप्रिया इतना वक्तव्य दने के बाद चुप हो गई। उसने अपने पावा की जोडी को उतारना शुरू किया। उपस्थित महिलाओं ने एक भाव भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। कुछ क्षणों के बाद एक प्रश्न के साथ इस कक्ष की शान्ति भग हुई। प्रश्न था— सृजन म कलाकार को जो सुख मिलता है क्या प्रदशन म भी वह सुख प्राप्त करता है ?"

निश्चय ही श्रीमती जी! सृजन का सुख उसका अपना सुख है एक कर्ता का सुख है। परन्तु प्रदशन का सुख एक दाता का सुख है। जब दशक को अपना सुख वह बाटता है दता है तब उसके सुख की महत्ता और भी अधिक बढ जाती है। वास्तविक प्रशसा, सच्ची दाद एक कलाकार और दशक दानों के लिए पारस्परिक सुख के आदान प्रदान का सुखमय सगम है। इसीलिए भारतीय कला कभी एक भीड मे प्रदर्शित नहीं की जाती। उसके प्रदशन के लिए एक सदन की, एक कक्ष की आवश्यकता होती है जिसमे आमने-सामने बैठ कर कलाकार की आकाक्षा विचारो, भावो का स्तर आका जा सके। कलामय प्रदशनों म गुणीजना की, कला ममज्ञों की उपस्थिति उतनी ही आवश्यक व महत्त्वपूर्ण है जितनी स्वय कलाकार की। इसके अभाव म अपात्रो म कलाप्रदर्शन होगा जिसमे न कलाकार की और न दर्शकों को ही सुख की प्राप्ति होगी। कला का सुख किसी काम सुख स रति-सुख से—कम नहीं। कलाकार और दर्शक के बीच इच्छाओं विचारों, भावों आदर्शों की सुखमय सरिता का सपक तभी स्थापित होगा जब दोनो ही देन और ग्रहण करने म समथ होगे। भारतीय ऋषियों ने विशिष्ट काम-सुख को परमानन्द स तुलना की है। वह भी प्राप्त होता है जब दोनो लेन-देने, देन-लेन, दान-ग्रहण, आदान प्रदान दान प्रतिदान की परिस्थिति म एक-दूसरे के प्रति सपूर्ण समपण के माध्यम से पहुच जाते हैं। क्योंकि कलाकार उसकी कला, एक ही समय म एक ही स्थान पर अनेकों का रजन करते मे, सर्वे सम्पादित

करने म, समथ हो सकती है। इसलिए उसकी स्थिति एक व्यक्ति विशेप की न होकर एक विशिष्ट सजक के प्रतीक की हो जाती है। प्रकृति क सर्वांगीण सौन्य क सजक की जस हम प्रशसा किए बिना नही रह सकते उसी प्रकार सवसौ दयमयी कला के प्रति आकष्ट य अनुग्रहित हुए बिना भी हम नहीं रह सकत। इसीलिए एक सच्चे कलाकार का स्थान ससार म सर्वोच्च है। सब देकर भी वह सब पूण सव सुखी हाने की क्षमता रखता है।

क्या नत्य स भी जीवन के चारा उद्दश्यो की प्राप्ति हो सकती है ?'

'क्यो नहीं ?

फिर कलाकार अभावग्रस्त क्या हैं ?

अपनी कला क कारण नही। अभाव व्यक्तिगत आदतो स उसम उत्पन्न होता है। फिर कला की भी 'अति अच्छी नही कही जा सकती। जब स्वर ताल, बोल सब एक समन्वय की सीमा म बँध हैं तब कलाकार का जीवन भी उद्दश्यो क सम वय की सीमा म बधा रहना चाहिए। धम अथ काम मोक्ष किसी उद्दश्य की जीवन म अति अच्छी नहीं। क्या अधिक खाना अच्छा है ? क्या अधिक आराम अच्छा है ? क्या अधिक व्यायाम, श्रम अच्छा है ? जीवन क लिए समन्वित य सब अच्छ है।— अति की सवत्र वजना की गइ है। भगवान् बुद्ध न अति तप किया अति तपस्या की अति उपवास रखे परन्तु अ त म किस नतीज पर पहुच ? इसी पर कि अति किसी की भी अच्छी नहा। तभी उन्होंन मध्यम माग का उपदेश दिया। बहिन जी ! धम अथ काम मोक्ष जीवन म, जीवन क लिए *जीवन क साधन है। साध्य जीवन है मात्र जीवन। साधनो के* लिए साध्य को नष्ट नही किया जा सकता। जीवन महत्त्वपूण है सब अस्तित्व का सार है। जीवन म ही व्यक्ति बुरे स अच्छा गरीब से धनवान् दुखी स सुखी, अज्ञानी से ज्ञानी बन सकता है। किसी कला का उद्दश्य भी उससे भिन्न नहा हो सकता।

रतिप्रिया का चुप होना था कि कक्ष मे पुन शान्ति का साम्राज्य छा गया। वक्त य म कही हुई बात साधारण होत हुए भी समझदारो क लिए साधारण न थी। उसके लिए मनन अपेक्षित था। कुछ क्षणों की चुप्पी क बाद एक शिक्षार्थिनी ने प्रश्न किया—

"क्या नृत्य कला के विषय मे कलाकारो म मतभेद नही है ?"

जहाँ तक कला के आधार और उद्देश्य का प्रश्न है वे सब एकमत हैं। भेद आता है उनकी प्रक्रियाओ मे। भारत म अभी तीन घराने है जो इस कला का प्रतिनिधित्व करते हैं। जयपुर, लखनऊ और बनारस। जयपुर ताल को महत्त्व देता है। लखनऊ रमणीयता का हामी है। बनारस छन्द कवित्त बोलो के माधुर्य का समर्थक है। परन्तु सबकी आधार शिला एक है, उद्देश्य एक है। व्यक्ति का उन्नयन। मानव का उत्सादन। अपने घराना की विशेषता को वे कथित माध्यमो से प्रदर्शन करते हैं। नृत्य की विशेष शाखा के वे विशेषज्ञ हैं। आज अब इतना ही।

रतिप्रिया के आखिरी शब्द आज के पाठ की समाप्ति के सकेत थे। सकेत के साथ ही कक्ष म जो शान्ति थी, वह हलचल म परिवर्तित हो गयी। क्षणो म सबने उसे चारो ओर से घेर लिया। कुछ ही देर मे चाय का सामान आ गया। प्रथम प्याली रतिप्रिया को दी गई। फिर यथच्छा सब चाय पान करने लगी। —रतिप्रिया के कक्ष से बाहर होते ही कक्ष शून्य हो गया।

रतिप्रिया का जीवन क्रम अपनी गति से चलता गया। अजय बाबू और रतिप्रिया की तथाकथित मा के साथ उसका लडका मोहन भी उसके घर के सदस्य थे। अनेक बार कुछ व्यक्ति अजय के साथ भी उसके यहा आने लग थे। त्योहारो के दिन इस घर म पहले की अपेक्षा अब अधिक चहल-पहल हो जाया करती थी। आगन्तुक व्यक्ति एक छोटे से समाज का रूप ले लेते थे। इस समाज म अनेक विषयो पर अनेक वार्ताए चर्चित होती थी। रतिप्रिया की अनुपस्थिति म अजय बाबू आगन्तुको की आव भगत कर लेते थे। उनकी सहायता म मोहन और उसकी मा प्राय घर म उपलब्ध ही रहते थे। रतिप्रिया के अपने कार्यक्रम मे घर मे किसी के आने जाने से कोई व्यवधान नही आता था। उसका शिक्षण व्यवसाय नियमपूर्वक अबाध गति स चल रहा था। आर्थिक रूप स रतिप्रिया अजय पर किसी भी तरह आश्रित नही थी फिर भी अजय बाबू ने घर का खर्च अपने जिम्मे ही प्राय ओट-सा लिया था। आवश्यकता की कोई भी चीज प्राय उसकी नजर म पहले स ही रहती थी और इसलिए अभाव के पूर्व ही वे उसकी पूर्ति कर देते थे। इतना सब होते हुए भी रतिप्रिया आतिथ्य कर्तृ और अजय इस घर मे अतिथि थे।

बहुत शीघ्र विभिन्न आगन्तुको के सपर्क व ससर्ग स मोहन बहुत कुछ औपचारिकता की बातें सीख चुका था। आगन्तुक का सत्कार और उसके लिए योग्य शब्द अब उसके लिए कोई नई बात नही रह गये थे। रतिप्रिया की प्रेरणा से उसने प्रतिदिन कुछ पढना लिखना प्रारभ कर दिया था। अपने रिक्त समय मे रतिप्रिया स्वय उसकी प्रगति का जायजा प्राय ले लिया करती थी और जो भी निर्देश वह उसे देती उसका वह ईमानदारी व परिश्रम से पालन करता। रतिप्रिया से कोई बात उसके खाली समय

मे पूछने म उसे शका नही रह गई थी। उससे अपनत्व पाकर मोहन मे उसके प्रति एक आस्था उत्पन्न हो गई थी जिससे उसके बढते हुए व्यक्तित्व मे एक निश्चयात्मक प्रवत्ति का विकास होना प्रारम्भ हो गया था। विगत के जीवन सपक उसने समाप्त कर दिए थे और अब एक ऐसी दिशा पकड ली थी जिसम उसे प्रकाश और आशाभरी जिदगी क आसार दृष्टि गोचर होन लगे थे।

रतिप्रिया मदिर से घर लौटी तो उसन अनेक व्यक्तियो की ध्वनियो को ऊपर से नीचे आते हुए सुना। उसन देखा कि मोहन और उसकी मा उनके लिए चाय बनाने की व्यवस्था म व्यस्त है। सहायता के लिए पूछने पर वे उसे इन्कार कर देते। व्यवस्था की समुचितता को जानकर वह ऊपर चली गई। उपस्थिति मे पहुची तो सबके चेहरे खिल उठे। करीब दस बारह की उपस्थिति थी जिनम एक दो को छोडकर सब परिचित थे। सबने रतिप्रिया का अभिवादन किया। बहुतो ने खडे होकर। क्षण एक क लिए वह द्वार पर ही हाथ जोडकर खडी हो गई। उसके चेहरे की प्रसन्नता और स्मिति से उनके अभिवादन का उत्तर स्पष्ट था। परिचितो स कुशल मगल के बाद उसने अपरिचितो की ओर दृष्टि डाली। प्रश्न हुआ आपकी तारीफ ?'

जितनी भी की जाय उतनी कम है।' एक परिचित न कहा। रतिप्रिया चुप रही। अपरिचित व्यक्तियो म से एक बोला—'मुझे दिनेश कहते हैं। दिल्ली म अध्यापन का काम करता हूँ।'

'प्रोफेसर हैं किसी कालज म ?"

जी। आप मेरे सहयोगी हैं, अनिल बाबू। कलाप्रेमी कलामर्मज्ञ।'

बडी कृपा की आपने।'

'और आप बहुत दिनों म तशरीफ लाए, खा साहब ?'

'बिचारे खा साहब को कौन पूछता है देवी जी ?'

'पूछा ही सबस पहले आपको है। शब्द किसी और क थे। तुरन्त उत्तर आया—

इसमे भी रश्क हो गया ?"

'रश्क नही खा साहब। अपनी स्थिति स्पष्ट हो गई।"

'हाँ तो आज कसे कृपा की ?

"यह भी कोई प्रश्न है ?'

' क्या नहीं ?"

यदि मैं अज करूँ कि इबादत के लिए हाजिर हुआ हू तो ?

मुझे कहना पडेगा कि खा साहब अच्छा खासा झूठ बोल लेते हैं। सब हँसने लगे। खाँ साहब बोले

' देवीजो ! बात सच यह है कि इस शहर म बहुत कम स्थान अब भले आदमियो के जाने आने के लिए रह गए हैं। कला साहित्य की तो कही बात ही नही होती। सगीत का केवल जनाजा ही नही निकला, बल्कि वह बहुत गहरा कही जमीन म दफना दिया गया है। लोगो की बात करत हुए सुनते हैं तो इच्छा होती है कि कही दूर भाग चलें। कभी दूर जात भी है तो और अधिक मुसीबत सामन खडी नजर आती है। ख्याल आता है शायद अब इस दुनिया के लायक हम नही रहे या यह दुनिया हमारे लायक नही रही। फिर सोचते हैं कि दुनिया से भागने से काम नही चलता। कुछ स्थान विश्राम के मिल ही जाते हैं। उनमे स एक स्थान आपका यह घर है।

'खूब !"

' सच नही हैं ?

' क्यो नही।

मैंने जो अज किया है वह सही वाका है। कहीं भी आप चले जायें चर्चा सुनगे तो पसे की, पोलिटिक्स की पब्लिसिटी की, सत्ता की सेक्स की। देश और समाज के दुख दद को समझने व उसको मिटाने की कोइ चिता व प्रयत्न नही करता। बात केवल बात, सिफ बात करके सब बडे-बडे दश का दुख दद मिटा देना चाहते हैं। गरीबो की दुहाइ सत्ता और पसा हथियाने का साधन बन गइ है। बडो बडो म नई बडी जगह चल जाइय देखने को मिलेगा ताश का खेल शराब कमसिनो क शबाब की सौदबाजी। कला के सस्थानो मे कलाकार नही साहित्यकारो की गोष्ठिया म साहित्यकार नही महफिलों म शायर नहीं गायक नही,

अदीब नहीं। प्रश्न उठता है देश और समाज में सर्वत्र यह सब क्या हो रहा है ? कल की ही बात है, देवीजी ! एक आदमी एक सज्जन की इमानदारी की तारीफ कर रहा था। वह कह रहा था कि वह व्यक्ति अपने इमान पर कायम है। दूसरा बोला, वह व्यक्ति जिन्दा है या मरा हुआ ? और जब तारीफ करने वाले ने कहा कि वह जिन्दा है तो वह बोला भाड़ जाओ ! तुम बहुत बड़े धोखे में हो। तुम्हें बहुत बड़ी गलत फहमी हो गई है। जिन्दे आदमी का इस युग में कभी विश्वास न करो। इस दुनिया में कोई इमानदार नहीं है। इमानदारी के मरे का कभी का चालीसा हो गया।

खाँ साहब की बात सुन कर सब हँसने लगे। अपने वक्तव्य के सूत्र को पकड़ते हुए खाँ साहब ने कहा

मब इन्सान अब बिकते हैं। इन्सान नहीं रहे सब वस्तुएँ बन गये हैं। केवल कीमत का अन्तर है। किसी की कम है, किसी की अधिक।

आप भी तो इन्सान हैं खाँ साहब।

हम अमूल्य हैं हमारी कोई कीमत नहीं है।'

क्या मतलब ?"

'यही कि हम दुनियाँ की नजर में इन्सान ही नहीं हैं।'

इतने मे मोहन चाय की सामग्री लेकर उपस्थित हो गया। कुछ क्षण के लिये वार्तालाप स्थगित हो गयी। रतिप्रिया ने रिक्त प्यालियों को पेय से पूरित किया व फिर वह उन्हें आगन्तुओं को वितरित करने लगी। कुछ ही क्षणों में सब चाय का आस्वादन करने लगे। खाँ साहब ने एक दो घूट गले से नीचे उतारने के बाद कहा

"इन्सानियत को जो खतरा इन्सानों से है वह और किसी अन्य हस्ती से नहीं देवीजी।'

'आप पहले चाय नोश फरमाइये।"

'शुक्रिया।' इसके बाद सब चाय पीने लगे। थोड़ी ही देर में सबने अपनी अपनी प्यालियाँ रिक्त कर दी। केतली में मोहन चाय और ले आया था। जिसने भी और लेनी चाही उसका पात्र पूरित कर दिया गया। दिनेश और अनिल की ओर संकेत करते हुए अजय बाबू ने

कहा—

'आपकी यात्रा विशेष काम के लिए है।"

"जसे ?"

'आपने देश की अनेक स्त्रियों से साक्षात्कार किया है। एक विशेष अध्ययन की दृष्टि स उनके विचार जाने है। इधर राजस्थान म भी आपकी यात्रा का विशेष उद्देश्य है कि कुछ विशिष्ट महिलाओं स समालाप करें। आपको यदि आपत्ति न हो तो "

मैं तो विशिष्ट हू नही। बिल्कुल साधारण औरत हूँ।"

इसका निर्णय तो आप करेंग।"

'दिनेश बाबू हमार अजय बाबू विनोदप्रिय व्यक्ति हैं। आज मेरी हँसी उडानी चाही तो आपको ले आय। क्यों खाँ साहब ?'

यह बात तो नहीं है देवीजी। विशिष्टता आप हो ही। इस शहर म तो क्या दूर दूर भी। दिनेश बाबू एसा व्यक्तित्व नहीं मिलता जो सहज बुद्धि स ठीक सीधा उत्तर दे सके। दे न दे यह आप पर निभर है।

आप भी इनस साज कर गये खा साहब ?"

साजिश की बात है तो जनाब समझ लीजिये कि हमने गलत कह है।'

साजिश नहीं है खा साहब।'

फिर ठीक है। परिस्थिति का निर्धारण कर कुछ क्षण के बाद रतिप्रिया बोली—

आपके अध्ययन का माध्यम बनने म मुझे कोई आपत्ति नहीं है श्रीमानजी! कारण किसी मेहमान को निराश करना मेरी आदत नहीं है। कितना समय लेंगे ?'

जितना आप दे सकें।'

विषय क्या होगा ?'

पुरुष और नारी का सबध।

यानी ?

'काम।

क्या वह ग्र थो से नहीं जाना जा सकता ?'

"जाना जा सकता है परन्तु सब कुछ नही।"

क्या सब कुछ कभी भी जाना जा सकता है ?"

'शायद नही, शायद, हाँ।"

फिर ?"

"प्रश्न है, देवीजी। किसी विषय पर आखिरी मत, आखिरी शब्द, कब आयगा कोई नही कह सकता। पर प्रश्न से मजिल तो तै होती ही है इससे भी इकार नही किया जा सकता।

"अवश्य।'

फिर शुरू करूँ।

शौक से।"

'एकान्त की तो आवश्यकता नही ?'

बिल्कुल नही। दिनेश ने अपने साथ लाया हुआ ध्वनि अकन सयत्र चालू कर दिया। प्रश्न हुआ

'नाम ?"

रतिप्रिया।'

उम्र ?

'२४ वष।

'अध्ययन ?"

साधारण।

कोई डिग्री आदि ?

बिल्कुल नही।

'शौक ?"

साहित्य कला, नाच, गायन।'

'इनकी तरफ झुकाव कैसे हुआ ?"

"घर के वातावरण म ?'

"कब ?'

बचपन से ही।"

"परिस्थिति।"

"शिक्षित, सपन्न, सुसस्कृत वातावरण।"

"जीवन मे भटकाव ?"

"अवश्य आया, परन्तु सभल गई।"

'अब आप नारी की स्वतन्त्रता को कितना महत्त्व देती हैं ?"

'मैं उसकी परतन्त्रता की रोधक नही हू, वस कोई भी प्राणी सब स्वतन्त्र नहीं है। न पुरुष, न नारी। परन्तु जहाँ तक गुण और शक्ति के विकास के अवसरो का सवाल है नारी और पुरुष म कोई अन्तर नही होना चाहिए।"

नारी की शक्ति क्या है ?'

"वह सब समर्थ है अनिल बाबू।"

तात्पय ?

"यही कि कोई भी पुरुष उसकी शक्ति के शासन के आधिपत्य क बाहर नहीं है।

वह शक्ति क्या है ?'

काम।

और यदि कोई काम स प्रभावित न हो ?'

फिर वह पुरुष नही है। प्राणी भी नही है।

'प्रमाणस्वरूप ?

पुरुषो का लिखा सारा साहित्य। सूत्रकार नाटककार, कवि लेखक गायक, मूर्तिकार चित्रकार सगीतकार सभी तो नारी की काम शक्ति के आगे नतमस्तक हैं।'

'तुलसीदास ने उसे हेय माना है।

आप सदम को काटकर बात करते हैं। क्या सीता मन्दोदरी, कौशल्या, सुमित्रा उनकी सम्माननीय नारियाँ नही थी।'

महाप्रभु चैतन्य भी तो नारी से दूर रहन की उससे सभाषण न करने की शिक्षा देते थे। अपने शिष्य सवक हरीदास को उन्होंने नारी से सभाषण करने क कारण अपनी सेवा से दूर कर दिया था। कवि जयदेव के एक गीत की स्वरलहरी की दिशा म वे उसकी ओर बढ गए पर ज्योंही उन्हे मालूम हुआ कि गायिका एक नारी है वे दूर से ही वापिस लौट गए और अपने सेवक को जिसने उन्हें यह सूचना दी उसे अपना रक्षक

घोषित किया। ऐसा क्यों ?"

"दिनेश बाबू। न मैं तुलसीदास हू और न चैतन्य महाप्रभु। विशिष्ट व्यक्तियों की विशिष्ट परिस्थितियों से मैं परिचित नही हू। किस सदर्भ मे क्यों किसने क्या कहा, मेरा ज्ञान नही है। फिर भी मेरा अपना अनुभव है कि नारी सब शक्ति का रूप है पुरुष उसके द्वारा विजित रहा है और रहेगा। पशुबल म यद्यपि वह पुरुष स हय है परन्तु पशुबल ही एकमात्र बल नही है। शक्ति के आकारो, प्रकारो म उसका स्थान बहुत नीचा है। यदि यह बात नही होती तो पशुबल के प्रतीक मगर हाथी, सिंह मानव की शक्ति के वशीभूत न रहते। नारी अपनी शक्ति के कारण अपराजेय है दिनेश बाबू।"

"क्या कोई प्रामाणिक आधार आप प्रस्तुत कर सकती हैं ?"

क्यो नही ?'

जस ?

सष्टि के प्रारम्भ की कल्पना कीजिये। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त म हमे सवप्रथम काम के आविर्भाव का सूत्र मिलता है जब प्रकृति अपनी निद्वन्द्व अवस्था म थी। अन्यय पुरुष म सजन की कामना उत्पन्न हुई। क्यो ? पुरुष प्रकृति के बिना बेचन था, दुखी था। लाखो करोडो वर्षों क बाद आज भी वही अवस्था है। पुरुष नारी क अभाव म बेचन है। यही उसके सुख का आगार है। जब नारी यह समझ लेती है वह अपराजेय हो जाती है। वेदो का वह अव्यय पुरुष आज के पुरुष का ही प्रतीक है और निद्वन्द्व प्रकृति नारी का। और आग चलिए। हिरण्यगभ सूक्त का हिरण्यगभ कामदेव के अलावा और कुछ भी नही। वह उभयलिंगी अद्धनारीश्वर था। उत्पत्ति के लिए विकास के लिए उस उभयलिंगी अद्ध नारीश्वर को पुरुष और नारी म विभक्त होना पडा। कारण, अकेला पुरुष अपने विकास के लिए, अपनी उन्नति के लिए अयोग्य था, अपाद था, निरथक था। काम की गरिमा हमारे ऋषियो स छिपी हुई नहीं थी। सन्तुलित काम को उन्होने श्रेय और अनुचित कामाचार को उन्होने अश्रेय और निषिद्ध माना है। यम यमी का सवाद, ऋषि सोम का वणन आदि-आदि अनेक स्थल हमको हमारे सर्व प्राचीन ग्रन्थों

म मिलेंगे जो काम की सर्वव्यापकता और सवसत्ता का दिग्दशन अपने को करा सकते हैं। क्योकि काम की तृप्ति का आधार सवश्रेष्ठ रूप स एकमात्र नारी है इसलिए उससे महत्त्वपूण और कोई वस्तु पुरुष के लिए नही हो सकती।'

'और कुछ ?'

'अथववेद का महा वाक्य 'कामोजज्ञे प्रथमो' ऋगवेद के सूत्र 'कामस्तदग्र समवतताधि' को छोडता नही। इस धमग्रन्थ म काम विवचन के साथ साथ प्रणयिजनो के विविध व्यापारो की यात्री भी हम मिलती है। काम के सन्तुलित उपभोग का मार्ग विवाह है। ऋग्वेद के विवाह सूक्त मे सूर्या के माध्यम स विवाह का आदश उपस्थित किया गया है। यजुर्वेद म भी काम का वणन प्रतीकात्मक रूप म अश्वमध यज्ञ के सदभ स किया गया है।'

'क्या वह हेय और कल्पना के बाहर की वस्तु नही है, देवीजी ? क्या एक राज महिषी भव्य अश्व के साथ कामाचार स्वीकार करेगी ?'

'यदि आप प्रतीकात्मक अभि यक्ति को सहज शब्दो के अथ म पढेंगे तो भारतीय शास्त्रो को सही अर्थों म कभी नहीं समझ सकेंगे। वहा अश्व वेग स्फूर्ति, बल और तेज का प्रतीक है। पहल पहले अश्वमध यज्ञ पुत्र प्राप्ति के लिए ही किया जाता था। कालान्तर मे सौ यज्ञो से इन्द्र पद-प्राप्ति की धारणा विकसित हुई। कृष्ण यजुर्वेद की तत्तिरीय सहिता और शुक्ल यजुर्वेद की वाजसनेयी सहिताओ मे यह प्रकरण नाटक रूपो म हमे मिलता है। वात्स्यायन के कामसूत्र की हस्तिनी मृगी प्रौढा मुग्धा नारियो के रूप म हमे यही मिलत है। अश्व, शश, वप मन्दवेग चण्डवेग पुरुषो क प्रतीकात्मक प्रकार हैं। परदारा,' 'जार नायक नायिका भेद से सबधित हैं। वात्स्यायन के कामसूत्र की भूमिका के हम इन वदिक स्थलो म दशन होत हैं जब सहवास की दृष्टि से वह हस्तिनी-महिषी को अश्व के साथ मृगी शश के साथ, वडवा वप क साथ व परिवक्ता मदवग चण्डवेग के साथ योजित करता है। ब्राह्मण ग्रन्थों ने सभोग को आध्यात्मिकता तक पहुचा दिया है। शतपथ ब्राह्मण मे 'सद' का दशन सभोग के दशन से होता है। "प्रवो देवाय अग्नये' की उच्चारण विधि सहवास

क्रिया की द्योतक है। च न्मास यज्ञ म त्रिष्टुभ और जगती छन्दा की साथ साथ उच्चारण शली मथुन क्रिया की प्रतीक है।'

आपकी य सूचनाए ?'

'काशी क वदन विद्वानो से मूल रूप मे सुनी व दखा हैं। कहन का तात्पय इतना ही है कि काम सव मान्य होने के कारण धमसम्मत है, वर्जित बिल्कुल नहीं है। बृहदारण्यक ब्रह्मानन्द की प्रतीति को रत्यानन्द की अनुभूति स उपमित करता है। इसक अनुसार परलोक मे स्थापित होन क लिए मथुन ज्ञान आवश्यक है। सभोग का स्पष्ट चित्र इसम वर्णित है। छन्दोग्योपनिषद मे किसी भी स्त्री का त्यागने का वजना है। कामात और सभाग की प्राथना करन वाली परदारा के साथ भी सभोग निषिद्ध नहीं माना गया है। जस-जस समय बीतता गया तथा साहित्य नया रूप लेता गया और काम के सबध मे नई नई प्रविष्टिया उनमे आती गइ धमसूत्रा और गृह्य सूत्रों मे उनका समावेश हुआ। सभाग सुविधा न रह कर एक सस्कार बन गया। गौतम धमसूत्र, वसिष्ट धमसूत्र आश्वलायन गृह्यसूत्र, आपस्ताम्ब गह्यसूत्र पारस्कर गह्यसूत्र, कामसूत्र मनुस्मृति आदि सभी ग्र थो ने समाज की सुव्यवस्था व उसमे काम तृप्ति क समुचित साधना की ओर सकत किया। अगर हम समस्त श्रौत और स्मात साहित्य का अवलोकन कर तो हमे मालूम होगा कि काम के सम्बध म उनम बहुत व विविध सामग्री है।'

'क्या वात्स्यायन के पूव भी कामशास्त्री हुए हैं?'

'क्यों नहीं?'

'जसे?

श्वेतकेतु, बाभ्रव्य चारायण, सुवणनाभ, घोटकमुख, गोनर्दीय कुचुमार आदि। वात्स्यायन न अपने सभी पूववर्ती आचार्यों का लाभ उठाया है, दिनेश बाबू! भारत म काम विद्या क सबध म एक एसा समय आ गया था जब विद्वान लोग उसके विविध अगो में विशिष्टीकरण करने लगे थे। इसस विषय का व्यापकता तो बढ गई पर साथ ही वह तितर बितर भी हो गया। वात्स्यायन ने इसे चरम विकास पर पहुचाया।

'वात्स्यायन की परपरा फिर टूटी क्या ?'

राजनतिक और सामाजिक परिस्थितियो क कारण । एसी बात नही है अनिल बाबू कि उनके बाद म इस विषय पर किसी ने अपनी कलम न चलाई हो । परन्तु ऐसा मालूम होता है कि देववाणी सस्कृत और उसकी धारा म नया मोड आ गया । सूत्रगत अभिव्यक्ति का स्थान शन शन पूण विवरण व वणन ने ने लिया । टीकाए मीमासाए नाटक किराताजुनीय अमरुशतक नषधीय चरित शिशुपाल वधम मालती माधवम रघुवशम अभिज्ञान शाकु तल रत्नावली आदि ऐसे अनक ग्र थ हैं जिन्होने वात्स्यायन के कामसूत्र म बहुत कुछ प्ररणा ली है ।

जसे ?

रतिप्रिया कुछ क्षण के लिए अपनी किसी विचारधारा म लीन हो गयी । कुछ क्षण की चुप्पी के बाद वह बोली—

निश बाबू ! वात्स्यायन का मत है कि समस्त की स्थिति म पुरुष स्त्री एक सा रति सुख प्राप्त करते हैं । नषधीय चरित्र मे शीघ्र भावी दमयन्ती को उपचारा स नल समान सुख प्राप्त करवाता है । माघ न शिशुपालवध म स्तनालिगन और नीरक्षीरकालिंगन का वणन किया है । मुख चुम्बन और निमित्तक का वणन भारवि के किराताजुनीय और कालिदास के कुमारसम्भवम म हमे मिलेगा । नखक्षत और दन्तक्षत क वणन भी हम इन्ही म पायेंग । चुम्बन की लज्जा हम अमरुशतकम म दखन को मिलगी । सीत्कारो का वणन और प्रयोग शिशुपालवध और किराताजुनीय म उपलब्ध है । नीवीमाक्ष मद्यपान कुचस्पश नाभिस्पश शिशुपालवध के विषय है । कालिदास क रघुवश क अग्निवण कामसूत्र उल्लिखित नागरक के एक अनुयायी मालूम देत है । उसी प्रकार इन्दुमती और अज के पाणिग्रहण के समय रोमाच और पसीन स द्रवित हो जाने का वणन है । जयदेव ने गीतगोविन्द म विपरीत रति का वणन किया है । कहने का तात्पय यह है कि आवश्यकतानुसार प्राय सभी सस्कृत क सम्भ्रम साहित्यकारो न वात्स्यायन क कामसूत्र का अनुसरण किया है । इसी से हम समझ सकते हैं कि कामशास्त्र और साहित्यकार का आरम्भिक काल से एक अटूट सब ध रहा है । ससार म संसारियो के लिए यह काम

एक मूल व मुख्य प्रेरणा है। यही एक शक्ति है जो मानव को बड़े से बड़े काय की प्रेरणा देती है व अपने सकल्पों से श्रेय या हेय बनाती है। शक्ति का मूल स्रोत होने के कारण कोई कला, व्यापार प्रयत्न इस काम से शून्य नहीं है। ऐसी परिस्थिति म नारी को, जो काम की आगार है अपराजेय मानने म किसी पुरुष को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। क्रीडास्थली के अभाव मे जस क्रीडा का कोई अस्तित्व नही होता वस ही नारी के अभाव म पुरुष के सुख का कोई अस्तित्व नहा हो सकता। प्रकृति के अभाव म पुरुष अस्तित्वहीन है। उसका पौरुष व्यथ और बेकार है।'

रतिप्रिया के वक्तव्य को सुन सभा हतप्रभ रह गय। दिनेश, अनिल, जा साहब सभी उसके अध्ययन मनन और निणयो के प्रति आश्वस्त थ। उसने देखा कि उपस्थित म से कुछ उबासी लेने के प्रयत्न मे हैं। उसने मोहन को आवाज दी। उसके उपस्थित होने पर उसने बहुत शीघ्र चाय पान का आदेश दिया। कुछ क्षण की चुप्पी के बाद अनिल ने प्रश्न किया, "क्या आप कह सकती हैं कि कामसूत्र की रचना कब हुई?"

"तीसरी शताब्दी मे अथवा उसके करीब।'

"आधार?'

"कालिदास भारवि माघ आदि सस्कृत कवियो ने उसके अनेक स्थलो का लाभ उठाया है। इगलण्ड के सर रिचार्ड बटन और एफ० एफ० अरबथनोट ने लन्दन म सन् १८८२ म कामशास्त्र सोसाइटी की नीव रखी थी। इन अग्रेज विद्वानो ने वात्स्यायन के मूल ग्रथ की खोज की और फिर सस्कृत विद्वानो की सहायता से उसका अग्रेजी अनुवाद किया। भारतीय कामशास्त्र के ज्ञान के लिए भारतीय इन अग्रेज विद्वानो के ऋणी हैं। उन्नीसवी शताब्दी के आखिरी चरण म तो अनेक अन्य ग्रथो का भी पता चल गया। मध्यकालीन युग म फिर एक बार कामशास्त्र का पुनरावलोकन हुआ।"

"मध्यकालीन युग से आपका तात्पय?"

"करीब १२वी शताब्दी।"

"उसके पहले?

"करीब एक सहस्र वर्षों तक एकमात्र वात्स्यायन के कामसूत्र की सत्ता कायम रही।'

'फिर ? '

"बारहवीं शताब्दी मे पारिभद्र के पुत्र कवि कोका न रति रहस्य की रचना की। यह पुस्तक श्री व यदत्त राजा के कामविषयक कुतूहल की परितुष्टि के लिए रची गई थी। वात्स्यायन को इस कवि ने अपना आधार बनाया। इस रचना की इतनी प्रसिद्धि हुई कि इसका नाम ही कोकशास्त्र पड गया। पद्मिनी चित्रिणी शखिनी एव हस्तिनी नाम देकर कोका पडित ने नायिका भेदा का निरूपण और उनके सहवास की तिथियो तथा यामो का वणन किया। यह प्रभाव वराह मिहिर द्वारा रचित उमकी बहद सहिता का था। वराह मिहिर एक अद्वितीय ज्योतिषी था जिसने यह सिद्धा त स्थापित किया था कि सूय च द्र ग्रह तारो का अमर समकालीन जीवन पर पडता है। छठी शताब्दी की उमकी इस रचना का काका पडित पर भी प्रभाव पडा और उसने तिथियो क सहारे स्त्री के विभि न अगो म काम की स्थापना के सिद्धा त का अविष्कार किया। वात्स्यायन और कोका पडित के समय की सामाजिक परिस्थितियो म एक बहुत बडा अ तर आ गया था। एक हजार वप पूव जो काम की दृष्टि से एक स्वतत्र समाज था वे स्वतत्र परिस्थितिया अब नहीं रही थी। विवाह प्रथा समाज का एक अभि न अग बन गई थी। स्वतत्र यौन सब ध वर्जित हो गया था। कोका पडित ने अपने समाज की परिस्थितियो क अनुकूल यौन शिक्षा दी।

'क्या प्राचीन भारत म मुक्त यौन सबधा पर प्रतिब ध नही था ?

बहुत कम। स्वय वात्स्यायन न सत्रधियो ब्राह्मणों और राजाओ की पत्नियो से यौन सब ध स्थापित करने की मनाही की है। परन्तु विवाह पूव प्रम-सबध खुल थे। पति के लाभ के लिए पत्नी का अपण करना व हो जाना बुरा नही माना जाता था। लोग भोग सभोग को समाज म बुरा नही मानते थ। परकीया से भोग एक साधारण प्रवत्ति थी।

और मध्यकाल म क्या यह ब द हो गया था ?

बुरा माना जान लगा था। जार कम न कभी ब द हुआ, न ब द

होगा। जब समाज मे परकीया से सभोग को व्यभिचार की सज्ञा दी लागो ने बहु विवाह पद्धति को अपना लिया। समाज के समथ लोग एक से अधिक विवाह अपनी काम तृप्ति के लिए करने लगे। कोका पडित के पूव ही विदेशी सस्कृतिया भारत मे स्थापित होने लगी थी। यूनान रोम और अनेक देशो के लोग भारत म बस गए थे। उनकी सस्कृतिया और धर्मों ने भारतीय जीवन को प्रभावित किया। दास प्रथा प्रचलित थी। वह भी काम-तृप्ति का एक साधन थी। वेश्याओ नतकियो और गायिकाओ का समाज म सम्मान था और व भी काम-तृप्ति का माध्यम थी। इन सब परिस्थितियो क चालू रहते समाज की धारा को यौन विस्फोट का भय नही था। अनिल बाबू! काम शरीर म एक प्राकृतिक शक्ति है तेज है, ऊर्जस्विता है। उसक दमन स शरीर मे अनेक तरह क विकार और व्याधिया उत्प न होती हैं जिससे शरीर, मस्तिष्क हृदय और जीवन तक खतरे म पड जाता है। यदि जीवन सबस अधिक महत्त्वपूण है तो उसकी रक्षा क लिए काम की तुष्टि का साधन उसकी व्यवस्था होनी ही चाहिए। वह व्यवस्था वात्स्यायन ने दी थी। कोका पडित न भी उसम अस्वीकृति नही की। रोटी रोजी की व्यवस्था स यह कम महत्त्वपूण नही है। जिनवा कनवेशन के बाद जब से ससार के अनेक देशो म वेश्यावृत्ति का उन्मूलन प्रारम्भ हुआ है अनेक अ य रूपो म वेश्याओ क ये प्रकार प्रसारित होने लगे हैं। आज स्थिति परिस्थिति यह है कि समाज का बडे से बडा सम्भ्रात घर इस दूषण प्रदूषण स मुक्त नही है।

यह आप कैस कहती हैं? प्रश्न अनिल का था। रतिप्रिया बोली—

'अपने अनुभव स। कुछ क्षण रुककर वह बोली—

'अनेक सस्थानो की महिला सेक्रेटरी स्वागती क्या ह? काल गर्ल्स का क्या व्यवसाय है? सभ्रात घरो क माता पिता, अभिभावक अपनी किशोर पुत्रियो को खुली बाहो और जाघो के कपडे पहनने की प्रेरणा देते हैं क्या? स्त्रिया म विशेषकर युवतियो म नाभि, पेट, वक्ष का नग्न प्रदशन किस लिए? अनेक भोग को पुतलियाँ, प्रतिमाएँ, इन वेशो म छिपी हुई हैं अथवा छिपाकर रखी जाती हैं। कामुक वासना की तृप्ति के

ये ही तो सभावित स्थल हैं अनिल बाबू !

' क्या पडित कोका के बाद भी इस विषय पर लिखा गया ?

अवश्य। ग्यारहवी और चौदहवी शताब्दी के बीच भिक्षु पद्मश्री हुए जिन्होने नागर सवस्व की रचना की। उनके अनुसार मनुष्य का रति सुख क्योंकि पशु स भिन्न है उन्होने काम शास्त्र की उपादयता पर ध्यान आकर्षित किया। केलि भवन काम-तुष्टि के लिए कसा होना चाहिए इसका उन्होने वणन किया। वात्स्यायन क नागरक निवास वणन का यह सक्षिप्त रूपमात्र है। स्थान और शरीर को किस प्रकार सुरभित किया जाना चाहिए उसकी प्रक्रिया इस भिक्षु ने दी। साहित्य की दृष्टि स इनका भाषा अग पोटली वस्त्र ताम्बूल पुष्पमालिका आदि का वणन महत्त्वपूण है। जहा कोका पडित के कोक शास्त्र मे स्त्रियो क प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष काम चिह्नों का परिगणन और वणन मिलता है वहा पद्मश्री न स्त्री के मदनमन्दिर की नाडिया को उत्तजित करने के उपाय बताये हैं। इसके बाद कवि शेखर—ज्योतिरीश्वर के 'पचसायक'—की रचना है जिसम नायिका प्रकारो का वणन है। इस विषय के अ य ख्यातिप्राप्त लखकों म हम कल्याण मल्ल मसूर नरश प्रौढदेव, जयदेव आदि के नाम मिलते हैं। काम विषय के आचार्यों म कवि शेखर ज्योतिरीश्वर ने गोणीपुत्र अथवा गोणिका पुत्र, काश्मीर के महान कवि और नाटककार क्षेमेन्द्र और जन परम्परा के अनुसार मूलदेव का नाम श्रद्धा स लिया है। परन्तु सारे अध्ययन और चिन्तन की सामग्री को यदि हम सक्षिप्त सार रूप म वणन करें तो निष्कष इतना ही है कि वात्स्यायन को सबने अपना आदि आचाय माना है और उन्ही के विचारो की बहुत अशो म सबने परिपुष्टि की है। वीरभद्र की कदप चूडामणि म अवश्य वात्स्यायन से बाह्य अवलेपो के सबन्ध म मतभेद ह। वीरभद्र बाह्य अवलेपा की काम उत्तजना म सहायकता को स्वीकार करता है।

म त्र त त्र यत्र आदि के सबन्ध म आपका क्या खयाल ह ?'

"इस विषय मे मेरे विचार स्वतत्र हैं दिनेश बाबू।'

"क्या हैं वे ?'

'मत्र सिद्धान्त है तत्र उसकी प्रक्रिया का नक्शा अथवा प्रतीक ह

और यत्र सिद्धान्त को मूतरूप मे सफल और सायक करने का पदाथ अथवा वस्तु। एक रहस्यात्मक सत्य को वैचारिक रूप में जब हम प्रकट करते हैं वह मत्र होता है। स्मृति के लिए जब वह अकित कर लिया जाता है उसकी सज्ञा तत्र की हो जाती है। वस्तुगत कामशीलता यत्र स प्राप्त की जाती है।"

'आपकी इस धारणा का आधार ?"

"मनन।'

अध्ययन आदि ?

"वह कुछ नही।"

आप मत्रो म विश्वास करती हैं ?'

व सब सत्य हैं। उनके बिना कोई प्रगति सभव नही ह।'

'यौन के सबध म और कुछ ?'

'कहा न कि वह सवव्याप्त है सवत्र सब शक्तिशाली है।"

क्या नारी के अलावा पुरुष के लिए कामतृप्ति के लिए और कोई माध्यम नही हो सकता ?'

प्रश्न बहुत बड़ा है, अनिल बाबू। परन्तु यदि सच कहा जाय तो नारी ही एक सवश्रेष्ठ माध्यम है।"

किस उम्र तक ?'

'जब तक पुरुष म शक्ति रहे।'

क्या वह उसम कभी मुक्त भी होता ह ?' सुनकर अब खा साहब माफी मागते हुए बोल उठे, अरे साहब! आप तो गालिब का यह शेर याद रखो—

'गो हाथों म जुम्बिश नही, आखा म तो दम ह।
रहने दो अभी सागर और मीना मेरे आगे।'

शेर सुनकर सब 'वाह वाह' करने लगे। तभी मोहन चाय और कुछ खाने की सामग्री लेकर उपस्थित हो गया। दिनेश ने ध्वनि अकन बन्द कर दिया। रतिप्रिया ने सबको पूववत चाय अर्पित की। बीच-बीच म साहित्य की चचा चालू हो गई। खा साहब के बाद अनिल ने कवि बिहारी के दोहे को पढ़ा। दोहा था—

"अमी हलाहल मद भरे श्वत श्याम रतनार।
जियत मरत झुकि झुकि परत जेहि चितवत एक बार।।"

चाय की चुस्कियो के बीच महफिल का वातावरण जागत हो उठा। तीसरे ने कवि केशव को सुनाया। वह बोला—

केशव कसनि अस करी जसी रिपु न कराय।
चन्द्र वदन मग लोचनी बाबा कहि कहि जाय।।

फिर वही ठहाका और वाह वाह। चायसमाप्त होने के बाद रतिप्रिया बोली अनिल बाबू! आपके प्रश्न का उत्तर भी यहा पढे गए शेर और दोहो मे अभिव्यक्त ह। उसने सुना यह पुरुष का प्रतिनिधित्व कर सकता है नारी का नही। रतिप्रिया के चहरे पर स्मित रेखाए खेल गइ। वह कोई उत्तर देती उसके पहल ही खा साहब बोल पडे माफी चाहता हू। बात तो कुछ अटपटी ह और कही भी कुछ फूहड ढग से ह। यदि इजाजत हो तो अज कर दू।

'अवश्य।

एक नायिका को उसके एक प्रमी ने पूछा कि एक औरत प्रम करने लायक कब तक रहती ह। जानते हैं उसन क्या उत्तर दिया ?

'नही।

"फिर सुनिये। वह बोली—आपक प्रश्न का उत्तर तो शायद मेरी नानी की अम्माजान ही दे सकती हैं। सुनकर सारा उपस्थित समाज हँस उठा। खा साहब बोले यह उत्तर अपन विषय मे नारी के सत्य को उजागर करता है।' विषय परिवतन स वातावरण की गभीरता को कुछ विश्राम मिल गया था। कुछ क्षण के विश्राम के बाद दिनेश बाबू ने पूछा—

प्रारभ करें ?

अवश्य। पुन यत्र चालित कर दिया गया। दिनश न पूछा—

'मध्यकाल मे जब समाज के ब धन धम, नतिकता व सदाचार के कारण कठोर हो गए तब उसका यौन जीवन पर क्या प्रभाव पडा ?'

दिनेश बाबू! बहु विवाह तो एक रास्ता निकला ही। शव पूजा का स्थान बहुनाश मे इन दिनो विष्णुपूजा ने ले लिया था। ऐसे युग मे भारत

के धार्मिक मंच पर कृष्णपूजा स्थापित हुई। विवाह, धर्म, नीति सदाचार के नाम पर शिव की जगह जो विष्णु स्थापित हुए थे अवतारों की परंपरा में कृष्ण ने इनका स्थान ले लिया। मुक्त यौन पर जो रोक लगी उसका उत्पादन कला साहित्य और धर्म मे व्यक्त हुआ। कलाकारो ने अपनी काम कल्पना को पत्थरो में उभारा चित्रो म प्रकट किया, काव्यो महाकाव्यो मे बिखेरा नाटको म सजीव किया। जिस प्रकार यौन का प्रकटीकरण प्रदर्शन व्यक्ति म उसके अगों पर, हाव भाव म, बातचीत मे पोशाक म सज्जा म, केशविन्यास आदि आदि मे होता है वसे ही सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन म उसका प्रकटीकरण व प्रदर्शन मन्दिरो म, भवनो म उत्सवो की सजावट म साहित्य म कला म होने लगा। वैष्णव आधिपत्य काल मे जिस शैव संस्कृति का दमन हुआ वही पुन पत्थरो म सजीव हो उठी। खजुराहो पुरी, कोणार्क काशी के मंदिर इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। जो वास्तविक जीवन मे छूटा वही धर्म और मूर्ति म स्थापित हो गया। जीवन की काम शक्ति ने पत्थरों को कन्दराओ को वस्तुओ को धर्म को, दैनिक जीवन को अपने प्रभाव से ओतप्रोत कर दिया। वे विशिष्ट काम तत्व की मुद्राओ म सजीव हो उठे। श्रीमदभागवत पुराण, गीतगोविन्द साहित्य मे इसके प्रमाण हैं। भीम गलिफण्डा, एलोरा अजन्ता की गुफाए इस परिवतन के सजीव उदाहरण हैं।

क्या भारतीय चित्रकला भी इससे प्रभावित हुई ?'

बहुत अशो म। चौदहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य का समय भारतीय लघुचित्रो का स्वर्ण युग रहा है। इस युग में विशिष्ट काम आसनो के चित्र निर्मित हुए हैं। उड़ीसा म खजूर के पत्तों पर ऐसे चित्रो का उत्कीर्णन हुआ है। हाल ही म नव विवाहितो की पुस्तकों के रूप म ग्राम स्तर पर ऐसे ही काम विशिष्ट चित्रों की रचना उड़ीसा में प्रारभ हुई थी। यद्यपि ये चित्र कोक शास्त्र के नाम म बिकते थे परन्तु वास्तविकता म इनके विशिष्ट काम आसन-स्वकल्पित व स्वरचित होते थे। राजस्थान, विशेषकर जोधपुर म, कागड़ा और गुलेर की पहाड़ियों मे भी ऐसे चित्रो की भरमार थी। सिरमूर रियासत के नाहन में वहाँ

राजा ऐसे ही चित्रो से अपने अतिथियो का मनोरंजन करता था। यह बात उन्नीसवी सदी की है। दरबार में राज्य के खर्च पर ऐसे चित्रों का निर्माण होता था। सत्रहवीं शताब्दी व अठारहवी शताब्दी मे मुगल कला मे ऐसे ही चित्रो की रचना चित्रकारो का आम पेशा था। मुगलो और अंग्रेजो के शासन के बीच भारत की भूमि राजाओ मे बंटी हुई थी और करीब ६५० से अधिक राज्य रजवाडे थे। राजा की योग्यता का एक प्रमाण उसका शिकारी और प्रजनन क्षम अथवा मैथुन-समर्थ होना था। इसीलिए राजा लोग सब शिकार करते थे और अनेक रानियां व दासियां अपनी काम-तृप्ति के लिए रखते थे। इनके अलावा उनका अनेक वेश्याओ नर्तकियों व गायिकाओं से भी यौन सबध रहता था। उनके लिए ये ही दो काम, शिकार और कामाचार शौर्य प्रदर्शन के लिए रह गए थे। अनेक राजाओ ने अपने विशिष्ट काम के चित्र कलाकारो से बनवाए थे ताकि उनके शौर्य का प्रमाण रह सके। ये चित्र के कोकशास्त्र न सही पर उसके मुकाबले के अवश्य थे। वासनाग्रस्त इन चित्रावलियों में प्रेम-लीला की परिणति विशिष्ट काम आसन में होती थी। जयदेव के गीत-गोविन्द की राधाकृष्णलीला ऐसी ही चित्रावलियो का एक ज्वलंत व मूर्त उदाहरण है। हिमाचल प्रदेश की कांगडा और बसोली की पहाडियो में क्रमश सन १७८० व सन १७३० में इन चित्रावलियों का प्रदर्शन हुआ था। करीब एक सौ बीस चित्रों में दस चित्र ऐसे हैं जो राधा और कृष्ण को विशिष्ट काम मुद्राओ मे चित्रित करते हैं। कामसूत्र पर आधारित होते हुए भी कोकशास्त्र भारतीय जीवन पर भी आश्रित था। इन चित्रावलियो में कोकशास्त्र और भारतीय काम जीवन का मिश्रित प्रभाव परिलक्षित है। कलाकार ने अपनी कृति में शास्त्र और जीवन वास्तविक जीवन दोनो से प्रेरणा ली है।

'क्या इन चित्रावलियों में प्रदर्शित जीवन ही राजाओ का वास्तविक जीवन था ?

नही अनित बाबू ! यह उनका काव्यमय का मनुलभ अथवा काल्पनिक जीवन था। राजस्थान के राजाओ की प्रेमलीला वेश्याओ नर्तकियो, रखैलो और गायिकाओ तक ही सीमित थी। अपनी रानियो के

साथ महल का जीवन उनका पूर्णरूप से भिन्न था। "जौहर" प्रथा से, उसके बलिदानों में तपी राजपूत ललनाओं को हम प्रेम की पुतलियां का स्वांग रचाते न सोच सकते हैं न देख सकते हैं। जो चित्रित हुआ है या कराया गया है वह सब तो उनके महलों के बाहर का रोमांस है। राजस्थान, मध्य प्रदेश व हिमाचल की पहाड़ियों के कलाचित्रों में प्रायः नारी प्रेमी की प्रतीक्षा में खड़ी अथवा उसके वियोग से विह्वल दिखाई गई है। इनमें नारी का वेश, उसका सौन्दर्य उसका लालित्य, उसकी सुकुमारता सब महलों के ऐश्वर्य को प्रदर्शित करते हैं उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। मगर वह सब इसलिए कि वह अभिजातवर्गीय सौम्यता, आकर्षण की पराकाष्ठा है और राजा लोग उस सौन्दर्य और ऐश्वर्यशील वातावरण के प्रति अपनी वासना में, अपने प्रेम में समर्पित थे।" कुछ क्षण रुककर रतिप्रिया अपने विचारों का संकलन करने लगी। उसने आगे कहना शुरू किया—

अनिल बाबू! चौथी से दसवीं शताब्दी के बीच संस्कृत कवियों को भी हम इसी काव्यात्मक जीवन की प्रेरणा देते देखते हैं।

'जैसे ?'

वह समय संस्कृत काव्य और कविता का सर्वश्रेष्ठ समय था। कविता और काव्य के नायकों की रोशनी में उन दिनों वास्तविक नायकों का देखा व परिलक्षित किया जाता था। संस्कृत के कवि भानुदत्त की रस-मंजरी ने देश व समाज के नायकों को काव्यात्मक जीवन की प्रेरणा दी। वासनात्मक प्यार ही वह वस्तु है जो काव्य को कविता को, हृदय स्पर्शी बनाता है। वासना ही भावात्मकता की आधारशिला व उसका स्रोत है। पन्द्रहवीं शताब्दी के इस कवि ने शारीरिक वासना के स्थान पर काव्यात्मक वासना का सहारा लिया और वह सभी कुछ लिखा जो यथार्थ जीवन में न होते हुए भी दृश्य में प्रतिष्ठित था। सोलहवीं शताब्दी में हिन्दी के कवि केशवदास साहित्य-जगत् में अवतरित हुए। उन्होंने काव्यात्मक वासना को और आगे बढ़ाया। इनकी कृति "रसिक प्रिया" इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि यथार्थ में जीकर भी, उसमें भोग कर भी, एक सामाजिक व्यक्ति काव्य के माध्यम से वासना के वांछित जीवन का आनंद उठा सकता है। इस कवि की नायिका विवाहिता होते हुए भी

अन्य प्रेमी की कामना करती है। विविध उपायो से वह अपने पति को धोखा दे सकती है। अपने प्रेमी के साथ पूर्व निश्चित स्थान पर भेंट करती है। वह मुक्त प्रेम का प्रदर्शन है, काव्यात्मक प्रेम की प्राप्ति है जिस पर धर्म नैतिकता समाज और उसके नियमों ने रोक लगा रखी थी। ऐसे साहित्य से ऐसी कला से समाज भी विशृंखलित नहीं होता और व्यक्ति की कामना की भी पूर्ति हो जाती है। अनिल बाबू! काव्य कविता साहित्य नाच गान, वादन मूर्ति, स्थापत्य सभी का उद्देश्य शारीरिक कामना का उदात्तीकरण है। इनमे प्राप्य अथवा प्रदर्शित अभिव्यक्ति से व्यक्ति अपने काल, स्थान वातावरण व सबन्धो की सीमाओ से परे की घटनाओ मन्तव्य व रसो का काव्यात्मक अथवा कलात्मक आस्वादन कर सकता है। इनके माध्यम से सृष्टि के सारे सुख दुख भोग उपभोग रस खुले हैं। एक जीवन मे अपने सीमित साधनो के कारण अपनी सीमित क्षमताओं के कारण जो व्यक्ति को उपलब्ध नही होता वह सब कुछ वह इस माध्यम से प्राप्त कर लेता है। हमारी सृष्टि ही नही बल्कि स्वर्ग के सुख तक इस काव्यात्मक अथवा कलात्मक प्राप्ति की सीमाओ से बाहर नहीं हैं। उर्वशी मेनका रंभा या रति सुख इसी तरह ऋषियो और धरती के राजाओ ने प्राप्त किया था। अकल्पित, असभव की प्राप्ति का यह माध्यम है अनिल बाबू।'

रतिप्रिया ने अपने वक्तव्य मे एक बहुत बडी बात कह दी थी। उपस्थित समाज की आखें और कान उसके मुख और वाणी पर आरोपित थे। कुछ क्षण की चुप्पी के बाद रतिप्रिया ने कहा

अनिल बाबू! कल्याणमल के "अनगरग" को यदि हम ध्यान पूर्वक पढ़ें तो हम इन लेखको का वास्तविक मन्तव्य समझ मे आ सकता है। वह लिखता है कि आज तक किसी ने ऐसी पुस्तक नही लिखी जो पति पत्नी को वियोग से बचा सके जीवन भर साथ रहने की प्रेरणा व उपाय दे सके। मुझे उन पर दया आई और मैंने यह पुस्तक लिखी। वह कहता है नाना प्रकार के सुखो के अभाव के कारण और एक ही प्राप्ति की एकरसता विरसता नीरसता व ऊब के कारण पुरुष अन्यत्र औरो की ओर झांकता है और जाता है। इसलिए उसे चाहिये कि अपने भोग

उपभोग का वह निरंतर परिवर्तन करे। कभी उसमें सन्तुष्टि न आने दे। इस प्रकार एक ही से अनेक सपक स्थापित हो सकेंगे। भोग, उपभोग, सभोग के इन विविध परिवर्तनों से ऊब नहीं आयेगी, विरसता नीरसता दूर रहेगी। शयन मंदिर म शयन सज्जा पर जो पति-पत्नी निरंतर नव काम-कलाओं का आविष्कार व आश्रय लेते हैं उन्हीं का गृहस्थ जीवन सदव सुखी रह सकता है। कल्याणमल के य विचार सवत्र व सब समय म सदव सत्य हैं?'

कुछ क्षण विरम कर उसने कहा,—"पन्द्रहवीं शताब्दी म एक खिलजी शासक न पन्द्रह हजार औरतों का दरबार अपन भोग क लिए निर्मित किया। कृष्ण के सबध म हम सोलह हजार गोपियों की बात पढ़त हैं। अनेक भारतीय शासकों न अपन भोग के लिए स्त्रियों की अनेक कतारें इकट्ठी कीं। अरब और अय मुसलमानी शासकों के हरम अनन्त औरतों स भरे हैं। मात्र भोग-परिवर्तन के लिए ही तो यह सब होता है। भोग और शिकार की यह प्रवत्ति धन और वभव की अधिकता के साथ अधिक बढ़ती है। तित्तीद पक्षी का शिकार राजस्थान के और वतमान म अरब देशों क शासक इसलिए करत हैं कि उसका मास उनकी कामशक्ति को बढ़ाता है। परन्तु क्या इन सबमें कभी किसी की तुष्टि हुई? क्या कलात्मक अथवा काव्यात्मक परिवर्तन का मुकाबला वस्तु अथवा शरीर-परिवर्तन कर सकता है? क्या काव्यात्मक भोग उपभोग सवसुलभ और उससे अधिक व्यापक नहीं है? एक म एक स अनेक का भोग कलात्मक अथवा काव्यात्मक भोग है, उसकी तुष्टि है। ज्योंही रतिप्रिया ने चुप्पी साधी दिनेश न पूछा—

अर्वाचीन लेखकों पर क्या आप कुछ प्रकाश डाल सकती हैं? जस सिगमण्ड फ्रायड

'फ्रायड मूलत मनोवैज्ञानिक थे जबकि वात्स्यायन कोक कल्याणमल आदि समाजशास्त्री। दोनों के दृष्टिकोणों म भेद स्वाभाविक है। फ्रायड अवचेतन को गत्यात्मक और क्रमशील मानते हैं। उनके विचार स व्यक्ति शशव स मत्यु तक काम शक्ति से प्रभावित रहता है। इदम अहम्, पराहम गतिशील व्यक्तित्व के अग हैं। इनका सन्तुलन सफलता का और

असतुलन विकार का द्योतक है। इसके बाद एडलर हैं जिनका सिद्धान्त है कि व्यक्ति म स्वभावत आत्महीनता का भाव होता है। उस पर विजय पाने की मानव की निरन्तर प्रेरणा और प्रयत्न चलते हैं। वह सपूण बनने के प्रयास म अग्रसर होना चाहता है। मनुष्य क समस्त चरित्र और व्यक्तित्व का यही मूलाधार है। इनके अलावा एक अन्य लेखक युग हैं। ये फ्रायड के बहुत समीप हैं। फ्रायड लुब्धा को मानसिक ऊर्जा का आदि स्रोत मानते हैं। इसका प्रमुख उपादान कामवृत्ति है। जीवन म इस कामवृत्ति का स्थान सर्वोपरि है और उसी का सबस अधिक समाज म दमन होता है। उनके अनुसार लुब्धा एक ऐसी शक्ति व्यवस्था है जो *अविनाशित्व सिद्धान्त म सचालित और परिचालित होती है।* एक क्षेत्र से हटाई जाने पर दूसरे क्षेत्र म यह प्रस्फुटित व अभिव्यक्त हो जाती है। काम प्रवृत्ति कायिक प्रक्रिया व लुब्धा मानसिक प्रक्रिया है। लुब्धा के विकास की सुनिश्चित अवस्थाए होती हैं। प्रत्येक अवस्था म विशिष्ट काम क्षेत्र पर उसका प्रभाव रहता है। युग ने फ्रायड और एडलर का मम वय किया है। फ्रायड के लुब्धा सिद्धान्त को वे मानते हैं पर उनके विचार से कामात्मक रूप के साथ साथ उसकी अभिव्यक्ति अधिकार लिप्सा म भी होती है। कुछ क्षण अपनी स्मृति का सकलन कर रतिप्रिया बोली—

'इनके अलावा भी आटो रक रिवस और सूती विचारक हुए हैं जिन्होंने फ्रायड से अपनी विचार भिन्नता व्यक्त की है। रक का मत है कि मानव म विकृति का उद्भव जन्म क मवगात्मक उद्वेग स होता है। प्रिय व्यक्ति से वियोग कराने वाली स्थिति को उन्होंने चिन्ता का मूल भूत और व्यापक काय माना है। जीवन म यह चिन्ता दो रूपो म व्यक्त होती है जीवनभय और मृत्युभय। इनस मुक्ति इनके अनुसार तभी मिलती है जब व्यक्ति समाज की धारा म सामान्य व्यक्ति की तरह अपन को प्रवाहित कर दे स्वय अपने माग का निर्माण करे दोनो के अभाव मे विकृति को अपना ले।—रिवस और सूती फ्रायड क उग्रतम अशो का स्वीकार नहा करते। उनके अनुसार अवचेतन की ऊर्जा का प्रयोग और दमन विवेक से होता है। भय और चिन्ताओ स मुक्ति समाज मे अच्छे सहायक सबन्ध बनाने से हो सकती है। उनका यह मत उन्हें भारतीय

ममाजशास्त्रियो के निकट स्थापित करता है। पूवकथित विचारको की सूची म हार्नी, फ्राम, सुलीवन के नाम भी गिनाए जा सकते हैं। सुश्री हार्नी व्यक्ति की विकृति को मूलभूत चिता क सदम म स्पष्ट करती है। फ्राम के अनुसार मनोविज्ञान की समस्या मूल प्रवत्ति की सतुष्टि या कुण्ठा से सबधित नहीं है बल्कि बाह्य जगत क सबधो स जुडी हुई है। मनुष्य और समाज के सबध परिवतनशील हैं। भूख प्यास काम जसी प्रवृत्तियाँ सावजनीन हैं। ऐन्द्रिकता प्रेम द्वेष, विचार अधिकार लिप्सा सामाजिक प्रक्रिया मे उत्पन्न होते हैं। इसलिए समाज केवल दमन ही नही करता निर्माण भी करता है। इनके अलावा भी ग्रोडेक, विल्हेम रीच, फ्राज अलेक्जेण्डर मैलिडे कार्डिनर मीड आदि फ्रायड से अपने भिन्न मत रखते हैं परन्तु जो मोड फ्रायड ने साहित्य व चिकित्सा जगत म दिया है उसकी महत्ता का अनुमान सहज मे नही लगाया जा सकता।"

क्या आपन इन सबको पढा है ?

'कुछ कुछ। इनके सबध म भाषण सुन हैं आलोचनाए सक्षिप्त रूप से पढी हैं। विद्वाना के शोध ग्र था स मैंने बहुत कुछ हासिल किया है। व प्रामाणिक हात हैं।'

बस ?

सत्य ता इतना ही है।

आपन कहा है कि नारी अपराजेय है

सो तो वह है ही।'

कसे ?

यदि यह नहीं होता तो क्या मैं आप सबको इतनी देर यहाँ ऐस बाँधे रखती ? रतिप्रिया क चहरे पर स्मिति छा गई। उपस्थिति म स एक बोला

'यह खूब कहा।

क्या यह असत्य है ?'

बिल्कुल नही।

'आप इसी घर म क्या आए ? क्यो आते हैं ?'

आपके लिए।"

असतुलन विकार का द्योतक है। इसके बाद एडलर हैं जिनका सिद्धान्त है कि व्यक्ति म स्वभावत आत्महीनता का भाव होता है। उस पर विजय पाने की मानव की निरतर प्रेरणा और प्रयत्न चलते हैं। वह सपूण बनन के प्रयास म अग्रसर होना चाहता है। मनुष्य के समस्त चरित्र *और व्यक्तित्व का यही मूलाधार है। इनक अलावा एक अय लेखक* युग हैं। य फ्रायड के बहुत समीप है। फ्रायड लुब्धा को मानसिक ऊर्जा का आदि स्रोत मानते हैं। इसका प्रमुख उपादान कामवत्ति है। जीवन मे इस कामवत्ति का स्थान सर्वोपरि है और उसी का सबसे अधिक समाज म दमन होता है। *उनके अनुसार लुधा एक ऐसी शक्ति यवस्था है जो* अविनाशित्व सिद्धात स सचालित और परिचालित होती है। एक क्षेत्र से हटाई जाने पर दूसरे क्षत्र म यह प्रस्फुटित व अभियक्त हो जाती है। काम प्रवति कायिक प्रक्रिया व लुब्धा मानसिक प्रक्रिया है। लुब्धा के *विकास की सुनिश्चित अवस्थाए होती है। प्रत्येक अवस्था मे विशिष्ट काम* क्षेत्र पर उसका प्रभाव रहता है। युग ने फ्रायड और एडलर का समवय किया है। फ्रायड के लु धा सिद्धात को वे मानते हैं पर उनके विचार स कामात्मक रूप के साथ साथ उसकी अभियक्ति अधिकार लिप्सा म भी *होती है।' कुछ क्षण अपनी स्मति का सकलन कर रतिप्रिया बाली—*

'इनक अलावा भी आटो रक, रिवस और सूती विचारक हुए हैं जिन्होंने फ्रायड स अपनी विचार भिनता व्यक्त की है। रैंक का मत है कि मानव म विकृति का उदभव जम क सवगात्मक उदवग से होता है। *प्रिय व्यक्ति से वियोग कराने वाली स्थिति को उ होंने चिता का मूल* भूत और यापक काय माना है। जीवन म यह चिता दो रूपा म व्यक्त होती है जीवनभय और मत्युभय। इनस मुक्ति इनके अनुसार तभी मिलती है जब यक्ति समाज की धारा म सामाय यक्ति की तरह अपने को प्रवाहित कर द स्वय अपने माग का निर्माण करे दोनो क अभाव म विकृति को अपना ले।—रिवस और सूती फ्रायड के उग्रतम अशो को स्वीकार नही करते। उनके अनुसार अवचेतन की ऊजा का प्रयोग और दमन विवेक स होता है। भय और विकारा स मुक्ति समाज म अच्छे सहायक सब ध बनाने से हो सकती है। उनका यह मत उन्हें भारतीय

समाजशास्त्रियों के निकट स्थापित करता है। पूर्वकथित विचारकों की सूची में हार्नी, फ्राम, सुलीवन के नाम भी गिनाए जा सकते हैं। सुश्री हार्नी व्यक्ति की विकृति को मूलभूत चिन्ता के संदर्भ में स्पष्ट करती है। फ्राम के अनुसार मनोविज्ञान की समस्या मूल प्रवृत्ति की संतुष्टि या कुण्ठा से संबंधित नहीं है बल्कि बाह्य जगत के संबंधों से जुड़ी हुई है। मनुष्य और समाज के संबंध परिवर्तनशील हैं। भूख प्यास काम जैसी प्रवृत्तियाँ सार्वजनीन हैं। ऐन्द्रिकता प्रेम, द्वेष विचार अधिकार लिप्सा सामाजिक प्रक्रिया में उत्पन्न होते हैं। इसलिए समाज केवल दमन ही नहीं करता निर्माण भी करता है। इनके अलावा भी ग्रोडक, विल्हेम रीच, फ्रान्ज अलेक्जेण्डर हैलिड कार्डिनर, मीड आदि फ्रायड से अपने भिन्न मत रखते हैं परन्तु जो योग फ्रायड ने साहित्य व चिकित्सा जगत में दिया है उसकी महत्ता का अनुमान सहज में नहीं लगाया जा सकता।'

क्या आपने इन सबको पढ़ा है ?

कुछ कुछ। इनके संबंध में भाषण सुने हैं, आलोचनाएं संक्षिप्त रूप में पढ़ी हैं। विद्वानों के शोध-ग्रन्थों से मैंने बहुत कुछ हासिल किया है। वे प्रामाणिक होते हैं।'

बस ?

सत्य तो इतना ही है।'

आपने कहा है कि नारी अपराजय है '

सो तो वह है ही।'

कैसे ?

यदि यह नहीं होता तो क्या मैं आप सबको इतनी देर यहाँ ऐसे बाँधे रखती ?' रतिप्रिया के चेहरे पर स्मिति छा गई। उपस्थिति में से एक बोला

यह खूब कहा।'

क्या यह असत्य है ?'

बिल्कुल नहीं।'

'आप इसी घर में क्यों आए ? क्यों आते हैं ?'

आपके लिए।'

क्यो बठे ? क्यो बठे रह गए ?"

'आपके कारण।

"मैं नीचे चली जाती, क्या आप यहाँ टिकते ?"

"नही।"

'और किसी से मुलाकात दिनेश और अनिल बाबू ने क्यो नही की ?" सब चुप। रतिप्रिया ने ही उत्तर दिया—

और कही रमणी रतिप्रिया उपलब्ध नही हुई। रतिप्रिया जानती है कि पुरुष के लिए रमणी जैसा आकर्षण और कहीं नही है। जब रमणी इस सत्य को समझ लेती है वह अपराजय हो जाती है।

नारी की अपराजय अवस्था कब प्रारभ होती है ?

'जब बिना आभूषणो के उसका शरीर सजन लगता है।

' यह कब होता है ?

'जब किशोरी अपने प्रति सजग होता है। जब पुरुष उसकी ओर आकर्षित होकर देखता है। जब सपाट वक्ष उन्नत होकर आकर्षित करते है। जब उसकी आँखें दपती हैं और देखने वाले को देखकर झुक जाती हैं।"

नारी का सबसे बडा हथियार प्रयोग क्या है ?

' आखें। इसके म देश शर पुरुष के लिए घातक होते हैं।

क्या आखा मे इतनी शक्ति होती है कि वे सब कुछ कह सकें ?'

निश्चय ही। साधना से उनमे प्रखरता आ जाती है।

क्या नारी मात्र इसके लिए सक्षम है ?'

हाँ और नही भी। यह सार्विक या विश्वव्यापक है, कारण पुरुष और नारी दोनो अपने प्राकृतिक व सामाजिक वातावरण अथवा परिवेश से प्रभावित होकर एक प्रकार बन जाते हैं। इसीलिए हर पुरुष के लिए हर नारी और नारी के लिए हर पुरुष उपयुक्त नही होता। सबसम अथवा एकरूप परिस्थितिया व विकास मे जोडी ठीक बठती है। थोडा बहुत समजन तो प्रकृतित होता रहता है।'

राजनीति म आपकी दिलचस्पी है ?"

बिलकुल नही।

कारण ?

"मरे स्वभाव के अनुकूल नही है।

किस राजनीतिक दल का आप अच्छा समझती हैं ?'

' किसी को भी नही।"

कारण ? '

'राजनीतिक दल का उद्देश्य सत्ता प्राप्ति होता है। वह स्वाथ, मक्कारी, झूठ से विमुक्त नहीं रह सकता। धम नीति, प्रतिष्ठा, आश्वासन, विश्वास सब उनक लिए अथहीन शब्द हैं।"

आप किसी सिद्धा त के प्रति प्रतिबद्ध हैं ?"

'मतलब ?"

किसी गुणात्मक अस्तित्व क प्रति।"

'अवश्य। उन सब गुणा के प्रति मेरी श्रद्धा है जा मानव को सुख सपत्ति स्वास्थ्य सुरक्षा और सम्मान की ओर अग्रसर करत हैं। इन गुणो के प्रति मेरी प्रतिबद्धता है। कारण ये उसके जीवन को व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन को सुखी बनाते हैं। वास्तव म मैं मानव के प्रति उसके सवसुख क प्रति प्रतिबद्ध हूँ, समर्पित हूँ।'

' विवाह क सब ध म आपकी क्या राय है ?"

मैं उसके विरुद्ध नही हूँ।

आपका गत जीवन कसा रहा ?"

सघषपूण।

विशष घटनाए ?'

जो बीत गया वह महत्वहीन है। मेरे लिए भी और दूसरा क लिए भी।'

वतमान म आप क्या करती हैं ?"

' अध्यापन।

' किस विषय का ?

काम और कला का।

' विवाह म दिलचस्पी रखती हैं ?

' क्यो नही ?

कब तक प्रतीक्षा करेंगी ?'

जब तक सक्षम और प्रकृति के अनुकूल साथी न मिले ।

धम म आपकी आस्था है ?"

अवश्य ।'

किस धम मे ?'

मानव धम म ।

नस ?

जो जीवन पद्धति उदारता स मानव को स्वभावत सुख समद्धि, स्वास्थ्य और सम्मान की ओर अग्रसर करे वही मानव धम है ।"

कसा जीवन आपको रुचिकर है ?

काव्यात्मक अथवा कलात्मक गहस्थी का जीवन ।

क्या आप अपनी वतमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं ?'

निश्चय ही ।

नारी के सुख की अनुकूल परिस्थिति क्या है ?

सवेदनशील उदार जीवन साथी का सहयोग और साथ ।

धन्यवाद ! और इतना कहकर दिनेश ने अपने ध्वनि अकन यत्र को ब द कर दिया । साथ ही वह बोला—

अजय बाबू ! हम दोना आपके कृतज्ञ हैं कि आपने हमे रतिप्रिया जसी सुसस्कृत नारी क साथ मलाप का अवसर दिया ।' रतिप्रिया की ओर सकेत कर उसने कहा — कष्ट और आतिथ्य क लिए हम आपस क्षमा प्रार्थी व कृतज्ञ हैं । उपस्थित समाज के भी हम क्षमा प्रार्थी हैं कि उन्हाने उदारता स हम हमारे काय म सहयोग दिया ।'

आज की गोष्ठी क लिए हम सब आपके एहसानमन्द हैं दिनेश बाबू ! यह सही कहा है कि बुद्धिमान व्यक्तियो का समय काव्य और कला के विनोद म बीतता है । कामशास्त्र के विषय म आज अनक बातें नई मालूम हुइ । सुश्री रतिप्रिया की वाणी न उन्ह रसमय बना दिया ।'

और कही यदि यही कथा होती ता हम तो कभी क उठ के चले जात । क्या ठीक है न पडित जी ?"

बिलकुल ठीक । खाँ साहब कभी कुछ गलत कहते ही नहा ।' कमर

म एक ठहाका हसी का साथ ही गूज उठा। मोहन चाय की सामग्री लिए ठीक इसी समय कमरे मे प्रविष्ट हुआ। चाय क इस दौर मे सब प्रसन्न हो पीने लगे। शेर शायरी गजल गीत चलन लगे। मिठाई नमकीन चाय की बीच-बीच म सवा चालू रही। समाज विसर्जित हुआ तब तक धूप छिपने लगी थी। रतिप्रिया और अजय बाबू सबको गली के द्वार तक छोडन आए। सबके चेहरो पर सजीव प्रसन्नता थी।

"इन्होने तो इसे देश कहा था । न ठुमरी न गजल ।'

"अरी पगली ! देश तो रागिनी का नाम है । राग रागिनी का सबन्ध तो स्वरो से है । सात स्वरो सा रे ग म, प ध, नी इनका व्यवहार आरोह अवरोह म कैसे होना चाहिए, कौन स्वर लगने चाहिए कौन नही लगने चाहिए, प्रमुख और साधारण अन्य स्वरो की व्यवहृति किस प्रकार और किस मात्रा म होनी चाहिए इन सब बातो पर राग रागिनी का स्वरूप बनता है ।"

"यह गीत देश नही है ?'

"फिर वही बात ! गीत देश नही है । यह देश रागिनी म गाया गया है । प्रस्तुत रूप इसका देश का है । पर इसका मतलब यह नही कि यह किसी अन्य राग अथवा रागिनी म न गाया जा सकता हो । आरोह मैं ध' की वजना करके तीव्र नी के साथ उठाकर अवरोह म कोमल नी का प्रयोग सब स्वरा के साथ जो किया गया है वह निश्चय ही इस देश का रूप देता है । पर, ठुमरी की गायकी म अनेक बार रागिनी का रूप खडा करके कुशल गायक शास्त्रीय वजनाओ से बाधित नहीं रहता । वह अपनी प्रस्तुति को कर्णप्रिय मनोहर सुमधुर व भावानुकूल बनान के लिए सप्त स्वरा का स्पश प्रयोग करता रहता है । बनारस लखनऊ, आगरा की अनेक विख्यात गायिकाएँ शास्त्रीय स्वर वजनाओ से बहुत सुन्दर ढग स छेड करती दखी गई हैं । ठुमरी मे भी विभिन्न भावा का सप्रेषण क्याकि मुख्य होता है इसलिए आवश्यक भी है कि गायक कुशलता से सब साधना की सहायता स उन्हे यथेच्छा प्रस्तुत करे । कुमारी शोभा ! तुम शुरू करो इस गीत को, उसी दिन की तरह । कुछ ही क्षणो म शोभा के मधुर कठ स गीत की शब्दावलि प्रवाहित होन लगी । शब्द थे—

बदरिया बरस गई उस पार, साजन ! आओ न !
प्रेम गगरिया रीती रह गई
खडी रही इस पार । बदरिया पार आओ न !
सावन भादा गरजे बरसे
कनक कामिनी महला तरसे
कहा बसा तेरा प्यार । बदरिया बरस गई उस पार साजन !

आओ न।'

गीत के शब्दों और कुमारी के सुमधुर कठ-स्वरो ने कक्ष के वातावरण मे बहुत शीघ्र वियोग के सवदनशील वातावरण को प्रसारित कर दिया। विभिन्न प्रकार से शब्दो और स्वरो की व्यवहृति से एक कमनीय भाव की परिस्थिति सुलभ हो गई थी। अनेक बार अनक रूपो म वे ही शब्द विभिन्न स्वरो म भिन्न भिन्न प्रस्तुति म वियोग के भावा-अनुभावा की सष्टि रचने लगे। कुमारी शोभा अपनी प्रस्तुति मे भावमग्न थी। रतिप्रिया की आँखें स्वत बन्द हो गइ। जब भी वह अपनी पूव स्वाभाविक स्थिति म लौटी उसन देखा कि श्रीमती प्रभा और अन्य महिलाएँ किन्ही दूर महलो के वातावरण म अपनी-अपनी आँखें बन्द किए हुए विचरण कर रही हैं। प्रेरणा का ध्यान सब समय कुमारी शोभा के चेहरे व उसकी प्रस्तुति पर था। शोभा के चेहरे की मुद्राएँ स्वरा और शब्दा की व्यवहृति के साथ विभिन्न कमनीय भावा अनुभावो मे प्रति पल परिवर्तित होती जाती थी। दशक और श्रोता के लिए उसके भाव स्पष्ट और सुखकर थे, प्रभावशील थे।

ज्यो ही शोभा ने अपने ठुमरी निवदन को समाप्त किया सब ओर स प्रशसा के शब्दो की उस पर बौछार होने लगी। सब के पूववत आश्वस्त होने पर रतिप्रिया ने कहा—

देखा प्रेरणा! निरन्तर साधना स ही ऐसे सामजस्य व प्रभाव की उत्पत्ति होती है। जब मन वाणी हृदय एक साथ, एक होकर काय करते हैं तभी कला का निर्माण होता है। प्रस्तुति प्रदशन के लिए यह सब आवश्यक है। इसी से काव्यानुभूति होती है। जहाँ शब्द अथ, परस्पर मे सहयोगी और साधक होकर एक रमणीयता की सष्टि रचते हैं वही काव्य का जन्म होता है। ऐसे ही काव्य से रस की धारा प्रवाहित होती है। ऐसा ही काव्य रसानुभूति का स्रोत होता है। ऐसे ही काव्य से मानव का उन्नयन उत्पादन, उदात्तीकरण हुआ है व होता है। क्योंकि एक व्यक्ति ससार के सब सुखो की सवत्र सब समय, सबसे सपृक्त होकर अपनी सब अवस्थाओ मे सुखानुभूति रसानुभूति, कामानुभूति शारीरिक रूप स नही कर सकता इसलिए काव्य कला ही एक **पर्याय है एक**

ब्राह्मण को सतुष्ट रहना पडता था। देश, जाति, धम और समाज की सुरक्षात्मक सेवा से कर आदि की प्राप्ति का क्षत्रिय का अधिकार था। कृषि व व्यवसाय से वश्य अपना पालन करता था। श्रम के पारिश्रमिक से शुद्र अपना गुजारा चलाते थे। सैद्धातिक रूप से यह भारतीय समाज के लिए धार्मिक व्यवस्था थी। इसे वणव्यवस्था क नाम से आज तक जाना जाता है। अपने वण के अनुकूल काय करना, उससे अथ अजन करना धम था। इस प्रकार उपार्जित धन स काम की तृप्ति धार्मिक उद्देश्यो म से एक था। इस प्रकार धम अथ, काम की प्राप्ति से एक भारतीय की सारी इच्छाए, सारी कामनाए स्वत धार्मिक रहते हुए पूरी हो जाती थी। जीवन म यदि कामनाओ का, इच्छाओ का, वासनाओ का अन्त आ गया तो मानव मोक्ष प्राप्त कर लेता था। यदि उनका अन्त नही हुआ और फिर सब कुछ भोगने के बाद भी भोगो मे वासना बनी रही तो भी धार्मिक जीवन जीने क कारण उस स्वग की प्राप्ति होती थी। एक धम प्राण व्यक्ति के लिए धम व्यवस्थित जीवन जीते मोक्ष अथवा स्वग की प्राप्ति वरदान रूप म निश्चित थी। इतने वक्तव्य से तो आप को आपत्ति नही है ?

जी नही।"

स्वग म क्या है ?"

नाना प्रकार के भोग।

'वाछित भोग। धम व्यवस्थित जीवन की परिणति वाछित सुखमय भोग मे थी। क्यो ?'

जी।'

'देवताओ के साथ निवास उनके जसा सौन्दयमय अभावरहित सौम्य जीवन अक्षय यौवना अप्सराओ की सेवा, नाना प्रकार के खान पान सवारी वस्त्र आभूषण आदि का बाहुल्य। रस, रूप गन्ध की वाछित तृप्ति।'

भोगो म सब आ गए।

'बिल्कुल ठीक है। अब आगे चलिए। आर्यों का आदि देव कौन है ?

"महादेव। शिव।"

'सबसे बडा देव, सबसे अधिक कल्याणकारी जन्म और मत्यु का नियन्ता। क्यो?'

अवश्य।"

'और उस देव की पूजा का प्रतीक क्या? क्यो? उस चिह्न की ही पूजा क्या? इस विषय म आज हम सब चुप इसलिए हैं कि तब से जब तक हमारा सामाजिक जीवन अनेक परिवतनो म से गुजर चुका है। पर आज भी हम सब मदिरा मे जाकर इस प्रतीक की पूजा करते हैं। देश मे सवत्र शिव मदिरा की भरमार है और सब वर्गों के लोग, स्त्री, पुरुष, बच्चे वृद्ध नारी वरागी शिक्षित, अशिक्षित, सयासी कतारों मे खडे होकर इस चिह्न की इस प्रतीक की पूजा-अचना करते हैं धूप, दीप, चन्दन केसर पुष्प, प्रसाद अपण करते हैं। हिन्दुओ के चारो धामा मे एक धाम रामेश्वरम भी है जिसकी यात्रा किए बिना एक सनातनधर्मी हिन्दू आय की जीवन यात्रा सफल नही होती। क्यो?"

'आप कहिए।'

'आप अपने को अपनी सस्कृति की जडो से न काटिये। देश धम और जाति की सस्कृतिया सहस्रो वर्षों मे क्रम विकास के सिद्धा तो पर निर्मित व विकसित होती हैं। इतिहास म एक युग हमारा ऐसा था जब काम उसकी चेष्टाए हमारे लिए अश्लील नही थी, बल्कि, धार्मिक थीं। उस युग म काम हमारे जीवन का एक उद्देश्य बना। वृहदारण्यक जसे उपनिषद ने काम सुख की तुलना ईश्वर प्राप्ति के सुख से की। उसस बढकर और किसी अन्य सुख को नही माना। किसी भी दिशा म हमारा विकास धम हीनता से नही हुआ। काम सूत्र की रचना के पूव और बाद मे भी हम काम को उसकी तप्ति को मोक्ष और स्वग के लिए एक धार्मिक साधन मानते रहे। उस युग म काम स्वतन्त्र था। उसके समुचित भोग उपभोग म बाधा नही थी। विवाह के पूव व्यक्ति के जीवन म काम अनुभूति स्वीकाय थी। ववाहिक जीवन मे उसके बाद भी स्वतन्त्र काम की जीवनी को नही अस्वीकारा गया। सामाजिक जीवन म सम्भ्रान्त बनने के लिए, प्रतिष्ठित बनने के लिए नायक बनने के लिए व्यक्ति के

लिए यह आवश्यक था कि वह वण धम द्वारा अर्जित सपत्ति से जल स्रोत के सहारे एक सु दर भवन का निर्माण करे जिसम दो शयन-कक्ष हो एक बाह्य-कक्ष हो जो शयन-कक्षो स कुछ दूर हो। वह बाह्य कक्ष सुवासित फूलो की क्यारियो स परिवेष्टित होना चाहिए और इनके आस-पास छायादार वक्षो के नीचे अनेक पालतू गहपक्षी पिंजरा मे सज्जित होन चाहिए। साझ होन पर सगीत और उसके बाद एक सप न नागरिक प्रेमिकाओ को प्रतीक्षा करता था अथवा दूतियो से बुलवाता था। इस प्रकार का रचनात्मक वणन हम कामसूत्र म मिलता है।

"कामसूत्र का आधार क्या है?"

'कुछ पता नही। भारत म सब ज्ञान आदि देवो स अवतरित हुआ है ऐसी मा यता है। ब्रह्मा या शिव—ये ही दो देव हैं जिन्होने ज्ञान की धारा प्रवाहित की। समस्त वदिक साहित्य ने उन्ही को अपना आदि स्रोत स्वीकार किया है। उसी परपरा के अनुसार अद्धनारीश्वर जब अपनी शक्ति महामाया से विभक्त होकर अलग हुए तो उनम कामच्छा प्रकट हुई। इस कामेच्छा की उन्होने इतनी पूर्ति की कि उस वणन पर दस सहस्र और अनको के कथानुसार शतसहस्र ग्र थ निर्मित हुए। इस कामच्छा का सक्षेपीकरण शिव के सवक नदी ने एक सहस्र ग्र थो म किया। आग परपरा कहती है कि दत्तक नाम के एक पुरुष को शिव न शाप देकर नारी म परिवर्तित कर दिया। कारण उसन उनके एक यन को दूषित कर दिया था। शाप से मुक्ति पान के बाद यह दत्तक जब पुन पुरुष बना तो उस नारी की समस्त काम चेतनाओ का ज्ञान था। अपने स्वामी शिव को प्रसन्न करने के लिए उसन काम पर अनेक ग्र थ लिखे। बाभ्रव्य पाचाल न मुख्य सपादक की हैसियत से इन्ही ग्र थो का एक विश्व कोष तयार करवाया। इस कोष की प्रस्तावना चारायण न लिखी। विशिष्ट काम अथवा मथुन पर सुवणनाभ ने लिखा। घोटकमुख न कुमारियो क साथ विवाह पूव काम प्रयासो का वणन किया। गणिका पुत्र न नारी-प्रलाभन पर अध्याय लिखे। वश्याओ पर दत्तक ने अपनी कलम चलाई। कुचुमार न औषध शास्त्र पर प्रकाश डाला। यह वह भूमिका थी पूव सदभ था जिस पर वात्स्यायन ने, जो मल्लनाग के नाम से पहले प्रख्यात

था अपने कामसूत्र की सष्टि रची।'

इतना वक्तव्य देने के बाद अपनी स्मृति को नियोजित करने के लिए रतिप्रिया कुछ क्षण के लिए मौन हो गई। प्रश्न क सूत्र को पकडते हुए उमने कहा—

'इस सदभ और ऐसी ही समस्त कथाओ का तात्पय इतना ही है कि काम शक्ति मनुष्य मे हजारो बल्कि लाखा रूपो म प्रस्फुटित हाती है और इसका दमन सहस्रा विकारो की जड है। इस ऊजस्व का निकास-माग अवश्यम्भावी है। यदि इसे सुनियोजित सुनिर्देशित न किया जाय ता यह भयकर और विनाशकारी घटनाओ म जीवन म विस्फोटित हो सकता है और होना है। सामाजिक प्रगति के साथ साथ जब स्वतत्र काम तृप्ति म बाधा आइ तो यही शक्ति धम के रूप म मन्दिरो म प्रस्फुटित हुई विभिन्न तात्रिक पूजाओ मे इसका समावेश हुआ। बौद्ध काल म अनेक तात्रिक सप्रदाय ऐसे बने जो गुप्त रह कर विशिष्ट काम मथुन को अपनी पूजा का अनुष्ठान व धम प्रक्रिया स्वीकारते थे। कब क्या, कैसे प्रारभ हुआ व चला कोई नही जानता। पर तु ऐसा मालूम होता है कि आचार सहिता के बदलते हुए आयामो ने दमित वग को काम शक्ति के सन्दभ मे नये सिद्धान्तो का आश्रय खोजना पडा और उनकी प्रवत्ति धार्मिक सिद्धान्ता क सहारे से धम प्रक्रियाओ म सचालित व सचरित हुई है। रहस्य पूजा क प्रत्यक सस्कार म वाममार्गी तात्रिक 'शिवाहम्' का जाप इसीलिए करना है। मथुनेन महायोगी मम तुल्यो न सशय' का सहारा लेकर उसने विशिष्ट काम को अपनी धार्मिक प्रक्रिया का अग बनाया। विभिन्न देवालयो पर काम की यह अभिव्यक्ति इसी दमन की प्रतिक्रिया है। वाममार्गी तान्त्रिको का यह सिद्धात था कि व सपूण परित्याग के साथ काम शक्ति का स्वच्छन्द उपयोग करते हैं। परित्याग और भोग की एकात्म स्थिति तात्रिकों की मोक्ष स्थिति थी जो पुन पुन ससार म आवागमन का अन्त कर देती थी। आग और घी जसे पदार्थों को साथ साथ रख कर, काम की आगार नारी को साथ अपनी पूजा म प्रवृत्त होना, विरक्ति की साधना को उसकी पराकाष्ठा पर पहुँचाना उसका लक्ष्य था। काम जसे विकटतम प्रलोभन स विरक्ति पाने के बाद

ससार का कोई भी प्रलोभन मानव को उसके लक्ष्य से नही गिरा सकता। इस एक प्रलोभन पर विजय प्राप्त कर लेने क बाद उसके लिए कोई कामना, इच्छा ऐसी नही रह जाती थी जो उसको कत्तव्यच्युत कर सके। इसी मोक्ष प्राप्ति के सिद्धात को सहारा बना वाममार्गियों ने अपने मुक्ति माग के महल को खडा किया था। परन्तु सपत्ति धन अधिकार, सुरक्षा की शक्तिया ने समाज म इस कष्टसाध्य निष्ठा को मान्यता नही दी और कुछ समय तक एक धार्मिक सप्रदाय के रूप म चलने के बाद इसका अन्त आ गया। सदाचार, नीति वष्णव पूजा न जब शक्ति सगठित की तो वाममार्गियो का यह धम किताबो और मन्दिरा पर की सपत्ति मात्र रह गया। एक समय के इतिहास के रूप म उस समय की सस्कृति और विचारधारा के रूप म आज भी खजुराहो कोणाक नागौर मन्दिर जगन्नाथजी के मन्दिर के बाह्य भाग की उत्कीण मूर्तिया मौजूद हैं। परन्तु ये अवशेष हैं। किसी भी प्रकार की प्रगति म जो म०ायक नही होता वह स्वत प्रकृति न नष्ट हो जाता है। यह वह भूत है जो कभी था। हमारी सस्कृति की उसक ः वाह की यह भी एक मजिल थी। वतमान स, उसकी सास्कृतिक धारा से आज उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

परन्तु रत्यात्मक, कामात्मक प्रवत्ति प्राणियो म अमर है। शिव मन्दिरा का स्थान नव निर्माण म विष्णु मन्दिरा ने लिया। जन मन्दिर भी प्रतिष्ठित हुए। मूल प्रकृति का उदात्तीकरण उत्पादन हुआ। नए मन्दिरो पर स्वग के देवी देवता अप्सरा अवतीण हुए। धार्मिक जीवन का प्रतिफल स्वर्गीय जीवन मे प्राप्त होता था। इसी को उत्पादित झाकी विभिन्न मन्दिरो पर उत्खनित हुई। अजन्ता एलोरा एलीफण्टा व भीम की गुफाओ म भित्तिचित्रो का निर्माण हुआ जिनम प्ररणादायक सौन्दयमयी तरुणिया चित्रित की गई। आकपक केशविन्यास कामुक सन्देश वाहक नयन-दृष्टि, उन्नत गोल उरोज लम्बी ग्रीवा पतली कमर सुस्थित नाभि, सुगठित नितम्ब, आकपक रूप से नारी के आकपण-केन्द्र स्थलो के रूपो मे चित्रित किए गए। विकास क्रम अग्रसर हुआ। शिल्प की परपरा चित्रो मे मूर्तियो मे, कविता मे, काव्य म अवतरित हुई। आज

हमारा इतिहास सभी प्रकार की धाराओं से ओत प्रोत है। वात्स्यायन, कोक, कल्याणमल आदि सब समाजशास्त्री थे। उसकी अर्थात समाज की हीनता उनका ध्येय नहीं था। जिस दत्तक का मैंने शिव के सदन से जिक्र किया है उसके सम्बन्ध में एक और भी विवरण यशोधरकी तेरहवी सदी की टीका जय मगला म उपलब्ध है। उसके अनुसार दत्तक एक ब्राह्मण का पुत्र था जिसने वेश्याओं के सम्बन्ध म सपूर्ण जानकारी हासिल करनी चाही और जब उसने जानने योग्य सपूर्ण ज्ञान लिया तो प्रेम की व्यवसायिकाओं ने अपनी मान वृद्धि के लिए स्वय अपनी सखी वीर सेना को उसके पास उनके लिए ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा के लिए भेजा। यशोधर की टीका जय मगला म यह घटना उल्लिखित है।

मूल प्रश्न के उत्तर को, शायद मैं बहुत लम्बा कर गई हूँ। याद रखने की बात इतनी ही है कि प्रारंभिक शाक्तो ने पिशाच पूजा को प्रारभ किया। उनके जीवन म बलि कपाल म पान व भोजन पूजा म कामिनी का उपयोग, प्रसाद म विचित्र खाद्य अखाद्य आदि धर्म के आवरण म सम्मिलित हुए। धीरे धीरे इन्ही की यह शक्ति ममतामयी मा की पूजा म परिवर्तित हो गई है। विचित्र अज्ञेय रहस्यमयी शक्ति से ये पूर्वकालीन शाक्त अपनी प्रेरणा लेते थे। मन्त्र जादू, दुर्लभ वस्तुओं से इनकी पूजा का क्रम सचालित होता था। बीज मन्त्र, विचित्र उपादान अस्वाभाविक बीभत्स व अप्रचलित क्रियाओं से व एक रहस्यमय वातावरण की सृष्टि रचते थे और वह भी मोक्ष के लिए। प्रत्येक भोग की अति से वे उससे मुक्ति चाहते थ। असाध्य, असामाजिक, अनैतिक अधार्मिक होने के कारण यह सप्रदाय प्रचलित विलुप्त हो गया।

'बन्धो और रत्यात्मक आसनों का वर्णन वात्स्यायन और कोक आदि पडितो ने दिया। परन्तु वे चित्रित बहुत बाद म हुए। पुराने कथित मन्दिरो पर उनका उत्खनन शाक्त पूजा और शिव पूजा की परपरा मे हुआ। बौद्ध काल म काम पर दमन नीति प्रारंभ हो गई थी। तांत्रिक व्यवस्थित होकर एक शक्ति बन गए थे। उन्ही का प्रभाव मन्दिरो पर उत्कीर्ण इन कामात्मक तथा रत्यात्मक मूर्तियों पर है। परन्तु ये मूर्तियाँ व चित्र मात्र अनुकरण हैं और वे भी अन्तर के साथ। काम की पिपासा

रतिप्रिया से सपृक्त अजय, मोहन और उसकी माँ का जीवन उसी के घर म एक परिवार के रूप म चलता रहा और एक दिन बसन्त पचमी आ गई। सूय की रश्मियो ने पृथ्वी का चुम्बन किया उसके पहले ही घर के लोग जाग कर अपने-अपने काय मे व्यस्त हो चुके थे। अजय रात तक जिस चित्र को बना रहा था उसे वह अपने आखिरी स्पश देने म लग गया था। मोहन अपनी पुस्तको मे व्यस्त था। उसकी मा घर की सफाई मे लगी थी। गत शाम को ही उसने अपने आज के वस्त्रो का चयन कर लिया था। वासन्ती रग की साडी व शाल मे सजी आज वह अपने कमरे से बाहर निकली। उसकी पूजा की स्थालिका म भी वासन्ती रग क पीले फूल व उपक्रम थे। अपने जूडे मे भी उसने पीले फीते व पुष्पो का उपयोग किया था। स्थालिका आवरण वस्त्र भी उसी रग का था। माथे की बिन्दिया केसर की थी और उसी से मेल खाते उसक कानो के कणफूल और गले की पतली-सी जजीर थी। ज्योही उसक पदचापो की ध्वनि मोहन ने सुनी वह कमरे से बाहर आ गया। क्षण भर के लिए उसकी दृष्टि रतिप्रिया की सौन्दयश्री पर स्थापित रह गई। रतिप्रिया की सहज स्वाभाविक स्मिति ने उसे और भी अधिक विमोहित कर दिया। वह उसकी दृष्टि का सामना न कर सका। उसकी आँखें झुक गइ। उसन पूछा—

"कोई काम है मोहन ?'

"नही तो।'

पढ रहे थे ?'

"जी।"

"फिर पढो।"

'मैं साथ चलूं बहिन जी ?'

'नही।'

पूजा का सामान पकड लूंगा।"

क्या इतना भी मैं नही ले जा सक्ती ? और फिर यह तो मेरी पूजा है। सारी सवा का श्रेय, फल, आनन्द मुझे ही लेना चाहिये। तुम अपना काम करो। अजय वाबू की आवाज का ध्यान रखना। आजकल कुछ चिंतित स रहत हैं। खर! समझ गए।"

जी।

अजय वाबू क सम्बन्ध म अपनी व्यवस्था से आश्वस्त हो वह सरस्वती के मन्दिर की ओर चल दी। वहा पहुची तो दखा कि पूण वासन्ती वाता वरण म मा सरस्वती की मूर्ति आज सज्जित है। उसकी सज्जा स्वरूप स्मिति सौन्दय सब वसन्त के प्रमोदमय वातावरण म आज उस सुसज्जित मालूम दिए। मुख्य मन्दिर के आग के विशाल कक्ष म सुमधुर सगीत चल रहा था। उसन सुना—

'आयो ऋतुराज आज!

बेला चमेली गुलाब,

चटकत कलि, गमक सुमन

कमलिन विकसित सरोज,

मनहर प्रकृति लखान, आया ऋतुराज आज।

रतिप्रिया सुमधुर सधे कठ से निकले गायक के सगीत का कुछ क्षण एक ओर कक्ष म बठ कर आनन्द लेती रही। ज्योही गायक ने अपना निवेदन समाप्त किया वह अपनी जगह स उठी व मूर्ति क आग जाकर उसने अपनी पूजा की स्थालिका को मन्दिर के पुजारी को पकडा दिया। अपने ध्यान मे लीन हो वह घुटना क बल बठ गई और मौन रूप मे अपना मानसिक भाव अपण निवेदित किया। उसके लाए धूप, दीप, कपूर, प्रसाद सुमन, वस्त्र पुजारी ने यथाविधि देवी मां सरस्वती के समर्पित कर दिये। स्थालिका मे लौटाई सामग्री देवी का प्रसाद थी जो भक्ता के

स्वतन्त्र उपयोग के लिए थी। रतिप्रिया ने आदर व भक्ति के साथ उसे स्वीकार कर लिया। वह पुजारी की उपस्थिति से अभी चली भी नहीं थी कि उसने सुना—

'देवी जी! आज तो आप भी कुछ माँ को सुनाइये।'

रतिप्रिया कुछ उत्तर देती उसके पहले ही अनेक व्यक्तियों ने उसको कुछ माँ के समक्ष निवेदन करने का अनुनय विनय करना शुरू कर दिया। इससे वह एक अजीब परिस्थिति में घिर गई। बहस मिथ्या अभिमान उसके स्वभाव के विरुद्ध था। यह कहना उसके लिये सम्भव नहीं था कि वह संगीत से परिचित नहीं है। अनेक अवसरों पर पुजारी ने व उपस्थित वृन्द में से अनेक व्यक्तियों ने उसको इसी कक्ष में अपने मन्द स्वरों में अकेले में प्रार्थना करते सुना था। सबके अनुनय विनय पर उसके चेहरे पर एक निश्चिंतता की मुद्रा अवस्थित हो गई। बिना किसी संकोच के मूर्ति के आगे मुँह करके अपने लिए उचित स्थान पर वह बैठ गई। ज्योंही कक्ष में अपेक्षित शान्त मौन की स्थिति आई उसके सुमधुर कंठ से निम्न शब्द प्रसारित हुए—

वागर्थाविव संपृक्तौ, वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥१॥
शुक्लां ब्रह्म विचार सार परमाम
आद्यां जगत व्यापिनीम्
वीणा पुस्तक धारिणीम अभयदाम
जाड्यान्धकारापहाम
हस्त स्फटिक मालिकाम विदधतीम
पद्मासने संस्थिताम
वन्दे ताम परमेश्वरीम भगवतीम
बुद्धिप्रदाम शारदाम॥२॥

द्रुमा सपुष्पा सलिलं सपद्मं स्त्रियः सकामा पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते॥३॥
पुंस्कोकिलश्चूतरसासवेन, मत्तः प्रियां चुम्बति रागहृष्टः।
कूजद् द्विरेफोऽप्ययमम्बुजस्थः प्रियं प्रियायाः प्रकरोति चाटु॥४॥

आकम्पयन कुसुमिता सहकारशाखा
विस्तारयन्परभतस्य वचासि दिक्षु
वायुर्विवाति हृदयानि हरन्नराणा
नीहारपातविगमात्सुभगो वसन्ते ॥५॥
रम्य प्रदोषसमय स्फुटचन्द्रभास
पुस्कोकिलस्य विरत पवन सुगधि
मत्तालियूथविरुत, निशि सीधु पान
सव रसायनमिद कुसुमायुधस्य ॥६॥
मलयपवनविदध कोकिलालपरम्य
सुरभिमधुनिषेकाल्लब्धगधप्रबध
विविधमधुपयूथर्वेष्टयमान समन्नाद—
भवतु तव वसन्त श्रेष्ठकाल सुखाय ॥७॥'

रतिप्रिया ने आखिरी श्लोक की समाप्ति के साथ ही सिर झुका कर प्रणाम की मुद्रा मे अपनी प्रस्तुति समाप्त कर दी। उपस्थित समाज की करतल ध्वनि से विशाल कक्ष गूज उठा। आज इस सभा भवन मे प० विद्याधर शास्त्री जसे सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान बैठे थे। जिस शुद्ध उच्चारण और महाकवि कालिदास की काव्यमयी भावना से अनुप्राणित होकर रतिप्रिया न अपना गान प्रस्तुत किया था वह विद्वान और पारखी जनो के लिय एक विशेष प्रसन्नता का अवसर था। अपनी प्रस्तुनि अथवा प्रदशन मे जिन मर्यादित सीमाओ का सहारा रतिप्रिया ने लिया था उसस उसकी समाज मे निष्ठा स्पष्ट रूप से झलकती थी। अपनी कतज्ञता के रूप मे पुजारी ने माँ सरस्वती की मूर्ति की कठमाला उतार कर रतिप्रिया को अपण कर दी। गायक व वादक मडली के उपस्थित कलाकारो ने पुष्प-पखुडियाँ व गुलाल का सुवासमय चूण उस पर न्योछावर किया। रतिप्रिया ने अपनी प्रशसा म पुलकित उपस्थिति स उठ कर हाथ जोड कर विदाई चाही। कक्ष के बाह्य द्वार से ज्योही वह बरामदे म आई उसने देखा कि अजय बाबू दीवार के सहारे बठे एक व्यक्ति स बातचीत कर रहे हैं। एक क्षण के लिए उनका दृष्टि मिलन हुआ और वह समझ गई कि उन्ह यहाँ देरी लगेगी। कुछ क्षण के लिए उपस्थित

समाज की दृष्टि, रतिप्रिया के जान के बाद, अजय पर स्थापित हो गई। समाज की इस दृष्टि मे अजय के प्रति सम्मान था, प्रशसा थी, शायद ईर्ष्या भी। किसी भाग्यशाली से कम आज अभी वह अपने आपको गौरवशाली नही समझता था। कुछ ही क्षणो म उसका ध्यान उपस्थिति के विशिष्ट समाज की ओर आकर्षित हुआ। सवादो के रूप मे विचार विमश हो रहा था। उसने सुना—

"भारतीय सस्कृति उसकी कला, धम, काव्य के रूप—सब प्रतीको म साकार हुए हैं।"

"जसे ?

'उनके उदबोधक स्वरूप की भारतीय ऋषियो ने, मनीषियो ने देवी सरस्वती की प्रतिमा के रूप मे साकार किया है। ब्रह्मा, विष्णु शिव आदि किसी देव के हाथ म उन्होंने वीणा पुस्तक माला एक साथ नही दी। हमारी सस्कृति के अनुसार इन कलाओ की सरक्षिका एक नारी ही हो सकती है। वह नारी जो स्वच्छ, गौरवण हो, हिम जसी महाश्वेता—शुभ्र वस्त्रो से आवत हाथो म सुदर साज लिए हुए हो जिसकी उपस्थिति किसी के लिए भयावह न हो जो सबकी शुभेच्छु हो जो सही शिक्षा दे सकती हो। रतिरूपा होते हुए भी जो पाशविक प्रवत्तिया का उदात्तीकरण, उनयन कर सकती हो उत्पादक, पालक, विनाशक शक्तियों को जो अपने वश मे रख सकती हो ऐसी सौम्य शात, अलिप्त मूर्ति म ही ज्ञान और कला का आवास हो सकता है और फिर भारतीय ही क्यो ? प्राचीन इतर सभ्यता के चितको ने भी इसी सत्य को अपनाया है। ग्रीस की देवी एथीना, रोम की देवी मिनर्वा इसी देवी सरस्वती के सक्षिप्त व परिवर्तित रूप हैं। आज इस नारी न इस वसत समारोह को जिस तरह अपने रूप सौदय व कला व्यवहृति मे सुशोभित व अनुप्राणित किया है वसी घटना हमारी स्मृति मे नही है। क्यो ?

निश्चय ही। वह स्वय देवी सरस्वती के आदश रूप का आभास देती थी।

आपने देखा नही कि वह अपनी प्रस्तुति म कितनी सयत, कितनी शात थी ? दूसरे कलाकारो को भी हमने देखा। कोई पूरे शब्द नही

बोलते थ। कई स्वरो की उछल कूद मे व्यस्त थे कइयो ने कला को शारीरिक कलाबाजी म ही परिवर्तित कर दिया था। उनकी प्रस्तुति म उसका वातावरण उसका वणन, उसकी अनुभूति गायब थी। स्वरो की सुमधरता लोप हो गई थी। किसी भाव की तप्ति, उसका सप्रेषण उनकी प्रस्तुति म नही था। ोनों का अन्तर स्पष्ट था। एक म वाछनीय सब-कुछ था। दूसरे मे अवाछनीय को प्रसारित कर कला के प्रति हीनता, अश्रय की सष्टि सजित की जा रही थी। हमारे कला शिक्षको व शिक्षार्थियो को अपने प्रदशन मे बहुत शीघ्र अब सजग हो जाना चाहिए कि व अपनी कला का, विशेषकर ललित कला का, प्रस्तुतीकरण किस प्रकार करें। यदि इ होने कला के इस अग पर ध्यान नही दिया तो बहुत शीघ्र दुनिया उनकी कला के नाम से ही दूर भागने लगेगी।''

यह थी कौन ?'

'इस मदिर मे प्राय दशनाथ आती है।''

परिचय ?''

उसकी गरिमा को देखत हुए आज तक तो उससे किसी ने कुछ पूछा नही।'

अभिमानिनी तो नही मालूम होती।

' बिल्कुल नही।

कोई अत्यन्त भाग्यशाली ही उससे परिचय और सपक की आशा कर सकता है।

इसम कोई स देह नही।

अजय ने आज मदिर के इस प्रशाल में सवत्र रतिप्रिया के प्रति ऐस ही सवाद व श द सुने। उसका हृदय प्रस नता व उल्लास से भर गया। अपनी इस खुशी को रतिप्रिया के समक्ष व्यक्त करने की इच्छा उसम तीव्रतर होती जा रही थी। आखिर कुछ ही क्षणो म वह अपने स्थान स उठ खडा हुआ। सीधा घर गया। देखा रतिप्रिया उसके ऊपर के कमरे में बैठी पढ रही है। उस दखते ही वह अपने स्थान से उठी। वह प्रकृतिस्थ थी। बोली आइये। साथ ही एक सहज मुस्कान उसके चेहरे पर निखर आई। रतिप्रिया न देखा **कि अजय** आज विशेष प्रस न

है। उसके चेहरे पर एक विशिष्ट अधीरता को भी प्रहसित देखा। बोली—

क्या बात है ?"

'मन्दिर म आपके लिए जो सुना उससे हृदय प्रसन्न हो उठा।

बस ?"

"वह क्या कम बात है ? कितनः को ऐसी प्रशस्ति मिलती है ?

'अनेकों को। अच्छे लोग सबकी तारीफ ही करते हैं।

ऐसी बात नही है।

"बहुत कुछ ऐसी ही बात है।

"मैं जो कह रहा हूँ क्या उसका महत्त्व नहीं है ?

यही कि आप उनसे भी अच्छे हैं।'

फिर न कहू ?"

"आप अवश्य कहिए। पर मैं जानती हू कि आप क्या कहेंग।'

कसे ?

इसलिए कि आपके मन और हृदय को पहचानने लगी हूँ।

सचमुच ?

'निश्चय ही।' और साथ ही उसने अजय क शाल को उसके कधो से उतार कर अपने हाथ म ले लिया। उस खूटी पर रखते हुए वह बोली—

अजय बाबू ! प्रत्येक पुरुष को नारी का सम्पर्क प्रकृतितः सुखकर होता है। दृष्टि श्रवण मस्तिष्क हृदय स्पर्श सब सपर्क उसके लिए सुखदायी हैं। और ये सब इसलिए कि वह अपनी उपस्थिति से प्रेय काम्य किरणो के बिन्दुओं को अपनी देह यष्टिका स प्रस्फुटित करती रहती है। प्रकृति म सृष्टि म यह स्वभावत होता रहता है। अनायास प्रकृति की यह प्रक्रिया सचालित रहती है। यौवन काल म यह और भी अधिक प्रभावी होती है। पुरुष, नारी के कस भी सपर्क की कैसी भी प्रशसा करे मैं उसे स्वाभाविक तौर स ग्रहण करती हू। किसम क्या कहाँ, कितना कसे अच्छा है, यदि इसका निरूपण नही है तो वह एक समझदार व्यक्ति की प्रशसा नही है।'

"यह बात नहीं थी रतिप्रिये। उन्होंने तुम्हारे सधे हुए शुद्ध स्वर, संस्कृत के शुद्ध उच्चारण, शब्दों की स्पष्टता व भावों की सहज अभिव्यक्ति की प्रशंसा की थी। तुम्हारी प्रस्तुति में परिश्रम जैसी कोई बात नहीं थी। इसके अलावा तुम्हारा चुनाव भी ठीक था। उत्सवों में, इस प्रकार के समारोहों में, मात्र प्रदर्शन होता है। और वही यदि सबसे अच्छा अवसर के उपयुक्त न हो मात्र एक अभ्यास अथवा ज्ञान की शृंखला बन कर रह जाय उपस्थिति का रंजन न करे तो वह एक कलाकार के चयन का दोष उसकी भूल ही मानी जायेगी। श्रोताओं के स्तर के अनुकूल उपस्थिति की ग्राह्य शक्ति रुचि के अनुसार ही कलाकार का अपनी प्रस्तुति का चयन करना श्रेयस्कर रहता है। तुम्हारी प्रस्तुति में वह सब था। अनेक अन्य उसके अभाव में प्रसिन थे।'

इतने में ही मोहन चाय व नाश्ता लेकर आ गया। शीघ्र ही दोनों उसमें व्यस्त हो गए। बीच बीच में अजय एक अर्थपूर्ण दृष्टि से रतिप्रिया को देख लेता था। उसकी यह दृष्टि उससे छिपी नहीं रही। अजय का मौन भंग करने के लिए उसने पूछा—

'कुछ कहना चाहते हैं?'

सोचता हूँ।"

फिर कहिये न।

अब तक साहस बटोर न सका हूँ।'

कोई अप्रिय बात है?'

'मेरे लिये तो नहीं।'

'मेरे लिये अप्रिय है?'

'शायद हाँ। शायद नहीं भी।"

अजय बाबू! जब आप अप्रिय नहीं हैं तो आपकी बात भी अप्रिय नहीं होनी चाहिये। कुछ क्षणों के लिए कमरे में शान्ति छा गई। रतिप्रिया की दृष्टि अजय पर थी और अजय की अपनी चाय के प्याले पर। वह चुस्की नहीं ले रहा था। कुछ क्षण के शुद्ध मौन के पश्चात उसने पूछा—

'रतिप्रिये! नारी के हृदय को कैसे जाना जाय?'

उसके व्यवहार से ।"

'और यदि वह उसका आभास न दे ?"

"उससे प्रश्न करके ?"

और प्रश्न करने का साहस न हो फिर ?

प्रतीक्षा करे ।"

कब तक ?'

'जब तक साहस में शक्ति न आ जाय ।'

और वह कब तक आ जाती है ?"

'एक न एक दिन अवश्य आ जाती है ।

समय नहीं है ?"

'कमजोर पुरुष के लिए कोई समय निर्धारित नहीं होता ।

'फिर मैं कमजोर हूँ । शायद बहुत कमजोर ।' पुनः कमरे में गम्भीर मौन की स्थिति कुछ क्षणों के लिए छा गई ।

रतिप्रिया ने उसे भंग करते हुए पूछा— 'यहां के वातावरण से ऊब गए हैं ?

"नहीं तो ।

"बाहर जाना चाहते हैं ?

अजय चुप था ।

उत्तर की उचित प्रतीक्षा के बाद उसने फिर पूछा— कहिये न !

'हाँ । पर अकेला नहीं ।

'ओह । परन्तु, किसके साथ ?'

अजय उत्तर न दे सका ।

कुछ क्षण की प्रतीक्षा के बाद रतिप्रिया ने ही पुनः प्रश्न किया— "मुझे साथ ले चलेंगे ?"

अजय की दृष्टि रतिप्रिया पर आरोपित हो गई । उसके चेहरे पर एक स्वाभाविक मुस्कान शोभित थी । कुछ क्षण के दृष्टि मिलन के बाद वह बोला— रतिप्रिये ! क्या वह सौभाग्य तुम मुझे दे सकती हो ? यदि वह सुख मिल जाय तो जीवनभर मैं उसे सुरक्षित रखूंगा । सच मानो प्रत्येक पुरुष के कथन की तरह मेरे वचन नहीं हैं । मैं जीवनभर तुम्हारे

सग को सहजता रहूँगा। जीवनभर कभी तुमको अपन स दूर नही रखूगा। जीवनभर तुम्हारी प्रत्येक इच्छा, आकाक्षा, भावना का आदर करूँगा। आज मुझ यह सब कहने का अवसर दिया उसके लिए भी मैं जीवनभर तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा। पर तु रतिप्रिय ! क्या तुमने यह सच कहा है ? उसने देखा कि रतिप्रिया उसके वक्तव्य के बाद गम्भीर और मौन हो गई है। वह कमरे में टँगी तस्वीर की ओर इस समय देख रही थी। उसकी अपनी ही यह तस्वीर थी। उसने सुना—

'बोलो, रतिप्रिये !' कुछ क्षण की प्रतीक्षा के बाद अजय न सुना—

मैं सोचूगी।'

कब तक ?"

"जल्दी ही।'

अभी नही ?"

'नही।

आज ?"

'शायद। अजय ने देखा कि रतिप्रिया के होठो पर मधुर मुस्कान की एक हल्की सी छाया दौड गई है। वह उठ कर नीचे अपन कमरे मे आ गई। अजय अपन आसन से उठकर कमरे म टहलने लगा। उसके चेहरे पर मुस्कराहट खेल रही थी।

आज रतिप्रिया अपने काम पर नहीं गइ। दोपहर का खाना आज उसने अजय बाबू के कमरे मे ही मोहन और उसकी माँ की उपस्थिति म खाया। वस त पचमी त्यौहार का दिन होने के कारण अजय के कुछ मुलाकाती मिलन आ गय थे। रतिप्रिया व घर के अ य सदस्य उनकी आवभगत व सत्कार म लगे रहे। राग रग, शायरी कविता व गोष्ठी म दोपहर से शाम हो गई। सध्या की श्यामलता पृथ्वी पर घिरते घिरते रतिप्रिया व अजय को अपने महमानो स छुट्टी मिली। एका त मिलत ही अजय ने रतिप्रिया से कहा—

'आज का दिन मेरे जीवन मे मेरी खुशी का एक विशिष्ट दिन है। मैं मेरी खुशी को, अपनी प्रस नता को आज सुख म परिवर्तित करना चाहता हूँ। इच्छा है हम बाहर घूमन चलें। दूर जगल म रत के टीवा

पर। शात, एकात चाँदनी म बहुत कुछ कहना है पूछना है, सुनना है आश्वस्त करना है। तुम्हारी सहमति से मेरे साहस में वद्धि होगी। सब कुछ कह कर अपने को हल्का करने मे मुझे सहायता मिलेगी। प्राथना को स्वीकार करो, रतिप्रिये !"

"मैंने इकार तो नहीं किया।'

स्वीकार करो, रतिप्रिये !' उसके चेहरे पर साथ ही स्मिति छा गई।

'ठीक है।"

'ठीक है नही। स्वीकार है आज मैं स्वीकृति सुनना चाहता हूँ। साथ ही उसने रतिप्रिया का हाथ पकड लिया।

स्वीकार है बाबा ! और वह अपना हाथ छडा कर उसस दूर हो गई। अजय उसकी तरफ अपन स्थान स ही देखता रहा। कुछ क्षण की चुप्पी के बाद वह बोला— तुम तयार हो जाओ। मैं सवारी ले आता ह। खाना पानी साथ ही ले चलेंगे। माँ और मोहन यही रहेंगे।

रतिप्रिया तयार हुई तब तक गहरी सध्या पृथ्वी पर उतर आई थी। अजय भी ताँगा लेकर आ गया। उसन पानी की कतली तौलिया चद्दर, प्लेटें आदि आवश्यक सामान ताँगे म रखवाया। मोहन और उसकी मा को आवश्यक आदेश द वे ताँग मे बठ कर चल दिए। रास्त म उन्होने खान के लिए आवश्यक सामान खरीद कर लिया था। दो तीन सुगधित पुष्पमालाए भी उन्होन खरीद कर ली।

प्रथम मजिल उनकी वही सरस्वती का मन्दिर था। आज दोनो ने एक साथ प्रसाद और माल्यापण देवी सरस्वती के किया। फिर व शक्ति के मन्दिर नागणेचीजी गए। वहाँ प्रसाद चढा कर उन्होने परस्पर म एक-दूसरे के गले मे माला डाल दी। फिर कुछ देर देवी की आरती सम्पन्न कर वे शिवबाडी के आगे टीवो म चले गए। सडक पर उन्होन ताँगेवाले को उनका इतजार करने के लिए कह दिया।

चन्द्रमा की किरणें बालू के टीवो पर अपना सौन्दय प्रसारित करने लगी। हल्की निमल चाँदनी म रेगिस्तान के बालू के ये टीबे अपना सौन्दय प्रदर्शित व प्रसारित करने लगे। ऊपर आकाश तारा से जगमगा

रहा था। बालू का प्रत्येक कण हवा के झोके के साथ अपना अस्तित्व चमका कर प्रकट करने लगा। दूर छोटी झाडियों में खिले वन फूलों की महक से वातावरण सुरभित था। हल्की शीतलता में उनकी मादकता और भी अधिक मोहक व प्रभावशील हो रही थी। थोडी थोडी देर में मोरों के गम्भीर स्वर में सारा जगल तरगित हो उठता था। दूर दूर तक शान्ति का साम्राज्य था।

अजय और रतिप्रिया एक सफेद चद्दर पर पास पास बैठे थे। कभी कभी मिष्ठान का छोटा-सा कौर वे एक दूसरे के मुह में देते थे। बातचीत चल रही थी। अजय ने पूछा—

ता तुम मेरी पत्नी से परिचित हो?'

'शायद वह मेरी बहिन थी।'

'शायद क्यों?'

शायद इसलिए कि हम तीनों कभी एक साथ नहीं रहे।'

"यह सही है।"

आप कहते हैं कि मेरी शक्ल उसस बहुत मिलती है?"

निश्चय ही।

जो जगह आपने कलकत्ते में बताई वहीं हम रहते थे।"

वहाँ वापस चलना पसन्द करोगी?'

बिल्कुल नहीं। और फिर किसके पास? कौन है वहाँ मेरा? वे ही कुछ होते तो हम किसी अन्य के साथ भागने पर मजबूर थोड़े ही होना पड़ता। अजय सुनकर चुप हो गया।

'जीवन के प्रति तुम्हारा क्या दृष्टिकोण है रतिप्रिये?

'जीवन जीने के लिए होता है अजय बाबू! सम्भव हो तो जीवन के प्रत्येक क्षण में इन्सान को जीना चाहिए।'

'जैसे?'

जीवन में ही इन्सान बुरे से अच्छा होता है दुखी से सुखी होता है अपमानित से सम्मानित होता है गरीब से धनवान होता है। इसी से जीवन महत्वपूर्ण है अजय बाबू! इसका प्रत्येक क्षण महत्वपूर्ण है। परन्तु, उसके लिए ही जो जीवन को महत्व देता हो वर्तमान को, उसके

उसने पूछा—

"रतिप्रिये! पुरुष का नारी के जीवन म क्या महत्त्व है?"

जीवन म वह उसका सम्बल है अजय बाबू!

'क्या उसके बिना वह नहीं रह सकती?

नहीं, अजय बाबू! प्रत्येक नारी के एक पुरुष होता ही है। वैसे ही, एक पुरुष के भी एक नारी होती ही है—हृदय में, विचार म। अनेक बार तो एक बालक को अपना आश्रय बना कर एक नारी अपना जीवन गुजारती है। पौरुष पुरुष चाहे वह बालक ही क्या न हो नारी के जीवन का सम्बल है। उसके बिना वह अरक्षित है। उसे पाकर ही वह सबल होती है शक्तिशाली बनती है।

तुम्हे यह एहसास कब हुआ?'

'घर स बिछुडत ही।

फिर?'

'जो आश्रय मिला उसे अपना लिया।

आज भी वही परिस्थिति है?'

"निश्चय ही अजय बाबू!'

मतलब?

एक भौरा अच्छा होते हुए भी ससार के सारे फूलो का चुम्बन नही कर सकता न उनका रस ही पान कर सकता है। उसी प्रकार एक पुरुष ससार की सारी स्त्रियो स सपृक्त नहीं हो सकता। न नारी ही सबल रूप म सब पुरुषों को प्राप्त कर सकती है। प्रकृति स्वत ही एक को दूसरे स मिलाती चलती है। एक स्तर एक भाव एक विचार क व्यक्ति जब परस्पर म मिलते हैं तो उनका मिलन सुखद होता है। यही तो नारी के लिए अपने पुरुष और पुरुष के लिए अपनी नारी का सत्य है। रतिप्रिया और अजय बाबू का मिलन भी इसी सत्य की एक घटना है। जीवन मे एक होकर यदि वे साथ चल सकें तो उनका जीवन सफल होगा। अलग-अलग रास्ते अपनाकर वे साथ नहीं चल सकते।

'मुझ पर विश्वास है रतिप्रिये?'

'क्या नही?'

"मुझमें तुमने क्या देखा ?

"प्रिय सूरत, प्रिय स्वभाव उदारता, त्याग, उत्साहित जीवन के प्रति रुचि समपण, मधुर भाषण।"

'और ?"

"सयम।"

"रतिप्रिय! तुम बहुत मधुर हो। इतनी मधुर कि मैं उसका पूण आस्वादन करने मे भी असमथ हू।' पुन उसने उस अपने वक्ष से चिपका लिया। रतिप्रिया समर्पित-सी उसके वक्ष स चिपकी रही। उसने सुना—

'ओह! मैं कितना भाग्यशाली हू। —कुछ क्षण मौन मे बीत गए। अजय चाँदनी मे रतिप्रिया की सौन्दर्य-आभा को अपनी तल्लीनता में देखता रहा। —इसी समय उसके लबे बाल बिखर कर उसके चेहरे और वक्ष पर आ गये थे। क्षीण, निमत चादनी मे जब वह खडी हुई तो जगल की आभा उस गर्वित व अनुपम दिखाई दी। पुन मोरो के स्वर ने जगल को तरगित कर दिया। सुरभित मादक पवन रह रहकर रतिप्रिया के वस्त्रो व बालो स अठखेलियाँ करने लगा।

उसने उसकी हथेली अपने हाथ म ले ली। दोनों का दृष्टिमिलन हुआ। अजय की अथभरी मुस्कराहट को लख रतिप्रिया न पूछा—

"कुछ पूछना चाहते हैं ?"

'सोचता हूँ क्या वह ठीक होगा।'

"क्यो नहीं ? पति-पत्नी के बीच छिपाव क्या ?'

"तुमने एक दिन कहा था कि नारी काम का आगार है।'

'अवश्य। तात्पय इतना ही था कि उसके शरीर म विस्तत काम को केन्द्रित करने की रति के पूव आवश्यकता होती है। पुरुष का काम, उसकी ऊर्जा उसकी काम शक्ति प्रकृतित एक स्थान पर केन्द्रित होती है, रहती है इसीलिए वह विशिष्ट काम प्रक्रिया के लिए बहुत उतावला अति गतिशील होता है। एक बार वेण्यदत्त के दरबार मे एक नारी नग्न अवस्था मे आई। बोली, 'तुम सब हिजड हो।' सभासद अवाक रह गये। कवि कोक ने वेण्यदत्त से आज्ञा चाही कि वह उस उसके उन्माद को ठीक कर सकता है। आज्ञा मिलने पर वह उसे अपने घर ले गया। वराह

मिहिर के चन्द्रकला सिद्धांत का उस पर प्रयोग किया। शरीर मे फैले हुए काम-उन्माद को चुम्बन, आलिंगन, रमण आदि से विशिष्ट काम स्थल पर केन्द्रित किया। कामतृप्ति के बाद वह रमणी सलज्जा होकर दरबार म आई। वस्त्रा मे आवरित थी। मुह पर घूघट था। यह था कोव कवि के यौन ज्ञान का चमत्कार।' इसीलिए कहती हूँ पुरुष अति गतिशील होता है।

'किमम !"

विशिष्ट काम की प्रेरणा में क्षरण म भी।"

'और नारी ?'

उस अपने सम स्तर पर लाने के लिए उस यानि पुरुष को एक भूमिका निभानी चाहिए अथवा निभानी पडती है।'

'और वह भूमिका क्या है ?'

'आह ! चुम्बन आलिंगन परिरभन की।"

"उनके भी क्या प्रकार हैं, प्रिये ?'

'अवश्य अजय बाबू !"

'जैसे ?"

'शास्त्रों म चुम्बन का अभिप्राय चूसन स है। —उनका स्थान आँखें गण्ड कपोल ममूडे मस्त, जिह्वा, होठ उरोज आदि आदि हैं।"

'बस ?'

'काम म, उसकी भूमिका म इति कहीं नहीं है। लगा म और भी अनेक स्थानों का चुम्बन में प्रयोग प्रादेशिक रीति के अनुसार किया जाता है जसे काँख, नाभि, उसका निम्न स्थल आदि-आदि। नारी और पुरुष के गुह्यतम अगा को भी आवश के उन्माद म चुम्बन और उसकी दबड दबड से वचित अथवा अछूता नहीं छोडा जाता। यह सब शास्त्रा में उल्लिखित व कला कतियों म प्रदर्शित व चित्रित है।'

'जैसे ?'

साधक रूप से तो घर चलकर ही मैं उन्हें आपको दिखा सकती हूँ। मेरी पुस्तिका में वे सब यथारूप चित्रित हैं।'

'बस ?" —और साथ ही अजय ने अपने हाथ की पकड उसक

हथली पर अधिक सशक्त कर दी। पुन एक अर्थपूर्ण दृष्टि मिलन हुआ। अजय न एक विलम्बित चुम्बन रतिप्रिया के कपोलो पर अंकित कर लिया। पलभर की चुप्पी क बाद रतिप्रिया ही बोली—

अजय बाबू! भारतीय कामशास्त्र यौन सम्बन्धो व उसकी प्रक्रियाओ म बहुत अधिक सम्पत्तिशील है। प द्रह प्रकार के चुम्बनों म प्रत्यक की अपनी भूमिका विशिष्ट है।

जस ?

निमित्तक चुम्बन म पुरुष नारी को अपन होठो पर उसक होठो को लगान के लिए विवश करता है। स्फुरितक वह चुम्बन है जब नारी अपन अधर को अधखिली कली क रूप म चुम्बन प्राप्ति क लिए पुरुष को अपण करती है। घट्टितक रूप म दोनो के ओष्ठ मिलन के बाद नारी की जिह्वा पुरुष क मुह म प्रवेश करती है। क्योकि कुलागना स्वभावत लज्जाशील होती है इसलिए वह ऐसे प्रसग म पुरुष क नेत्रो को अपनी हथेली से ढँक देती है। पुरुष नारी की ठोडी को ऊपर उठाकर दाएँ-बाएँ उस घुमा घुमाकर उसके अधर को जब चूसता है ऐस चुम्बन को भ्रात की सज्ञा शास्त्रकारो ने दी है। तिर्यक पाश्व स चुम्बन की प्रक्रिया है। इन दोनो म जब पुरुष अपने दाँतो का प्रयोग करता है तो ये पीडित्तक बन जात है पर तु यह पीडा प्राय सुख प्रवाहिणी होती है। उत्तरोष्ट चुम्बन म ऊपर के ओष्ट का चुम्बन होता है। दोनो ओष्टो को साथ पकडकर एक साथ उनका चुम्बन हो तो वह सम्पुट की परिभाषा मे आता है। ऐस प्रसग मे जिह्वा युद्ध की परिस्थिति मे फलित व सफल होती है। *पद्मश्री ने इनके सिवाय भी चुम्बनो को परिभाषित किया है। सूचि* प्रतात, व करि उनके अनुसार चुम्बनो के वे भेद हैं जब जिह्वा चुम्बन की प्रक्रिया म साथी के मुह मे अपने खेल खेलती है।

मोरा और मोरनिया के स्वरो न जगल की शान्ति को पुन एक बार भग कर दिया। कुछ ही क्षणो म रतिप्रिया बोली—

पत्नी अथवा प्रेमिका जब अपनी शय्या म अपने प्रिय की प्रतीक्षा म निद्रामयी हो जाती है और उसका पुरुष आकर उस जगान के लिए चुम्बन दता है, ऐस चुम्बन को जागरक की सज्ञा दी जाती है।

दपण अथवा चित्र को चुम्बित करना नए प्रेम का द्योतक व प्रदशन है। इसी प्रकार मूर्ति और किसी शिशु को चूमना सरात चुम्बन की परिभाषा म आता है। इनका नामकरण ही इस बात का प्रमाण है कि प्राचीन भारतीय जिस प्रकार यौन की विभिन्न प्रक्रियाओं को अपने सामाजिक व व्यक्तिगत जीवन मे महत्त्व दते थ।'

ज्या ही रतिप्रिया मौन हुई, अजय न वस कर उस अपने अक मे भरा लिया। सपुट का प्रक्रिया परिभाषित व साथक हुई। कुछ ही क्षणा म आलिगन पर चर्चा उनक बीच प्रारम्भ हो गई। अजय न पूछा—

'और प्रारम्भ ?'

'प्यार की प्रक्रिया का प्रारम्भ स्पश घषण व आलिगन से होता है। आँखें जब प्रेमी प्रेमिका को एक दूसरे के प्रति आश्वस्त कर देती है तभी इस प्रक्रिया का प्रारम्भ प्राय होता है। समाज में अवसर प्राप्त होने पर किंचित् स्पश अँधेरा अथवा एकान्त प्राप्ति पर पारस्परिक अग घषण, सुरक्षित स्थान पर आलिगन बढ़त हुए युगल प्रेम की भूमिका है। उत्तरोत्तर बढ़ते हुए काम प्रसग म बारह प्रकार क आलिगन काम शास्त्रियों न स्वीकार किय हैं।'

जस ?

सभी कुछ अभी जानियेगा ?

'अभी नहीं। —कुछ अभी यहाँ, कुछ घर पर। —सम्पूण अध्याय को तो जानना ही होगा। —पुन दोनो पारस्परिक पाश म बँध गय। मुक्त होने के बाद रतिप्रिया बोली—

'अजय बाबू! अपन किसी अन्य काम के लिए निकली हुई नारी का जब पुरुष स्पश करने का अवसर लेता है तो उसे स्पष्टक आलिगन कहत हैं। किसी समूह म साथ चलने अथवा अँधेरे में रहत वे यदि एक-दूसरे क अगों को कई बार विस्रब्ध तक रगड़ें तो वह उद्घृष्टक आलिगन कहलायगा। ऐसे ही अवसर पर यदि कोई किसी को दीवार से दबा द तो उसकी सज्ञा पीडितक होगी। यदि खड़े या बैठे पुरुष से दृष्टि मिलन करती हुई नारी उस अपने बाहुपाश म बाँधेगी अथवा उससे लिपट जायगी तो वह उसका विद्धान्त आलिगन होगा। खजुराहो

के पत्थरों पर यह आलिंगन बहुलता से उत्कीर्ण है। ये चार प्रकार के आलिंगन एक-दूसरे को प्रेम प्रसंग में प्रवृत्त करने की सूचना मात्र हैं। परन्तु जिनके प्रेम की घोषणा हो चुकी उनकी प्रक्रिया भिन्न है।

जैसे ?"

वे विशिष्ट प्रेम की भूमिका व उसके प्रसंग के परिचायक हैं अजय बाबू !

वही तो जानना चाहता हूँ।

सब अभी ? पुनः हल्की स्मिति उसके होठों पर खेल गई।

अभी मात्र भूमिका।'

जो विशिष्ट काम का रसास्वादन पहले कर चुके हैं उनके लिए यह भूमिका है अजय बाबू ! लतावेष्टितक आलिंगन में नारी अपने पुरुष को इस प्रकार अपने पाश में बांधती जाती है जैसे एक लता एक पेड़ को अपने विकास में आवृत्त करती रहती है। सीत्कार के महामन्त्र का उच्चारण ऐसे अवसरों पर उसके उन्मादित यौन का परिचायक है। वृक्षाधिरूढ में नारी वृक्ष पर चढ़ती हुई लता का रूप धारण करती है। आलिंगन की इस मुद्रा में उसका एक हाथ पुरुष की कमर में व दूसरा उसके कन्धे पर होता है। अपना एक पांव प्रेमी के पांव पर व दूसरा उसकी कमर पर वह चढ़ा देती है। खड़े हुए युगल ही इस आलिंगन का रस लूट सकते हैं। बाकी छह मुद्राएं शयन अवस्था की हैं। तिलतंदुलक में हाथ और जांघें परस्पर में आवेष्टित रहती हैं। जब नीर क्षीर के समान युगल सम्पूर्ण अंगों की पारस्परिक एकता का घनिष्टता का अनुभव करता है वह आलिंगन की नीर क्षीर अवस्था है। उरूपगूहन में मात्र युगल के जांघों की प्रतिबद्धता होती है। जघनापगुम्न में नारी की उन्माद प्रियता प्रलक्षित होती है। अपने आवेश में उसके केश वस्त्र गहने, शृंगार सब अस्त व्यस्त हो जाते हैं और वह अपने प्रेमी को चुम्बनों से दांतों से नखों से क्षत विक्षत करने में आनन्द लेती है। उसकी यह आक्रमकता ही उसकी सवेग तुष्टि है। स्तनालिंगन में नारी अपने वक्ष और उरोजों की घनिष्टता दबाव व भार की अनुभूति अपने प्रेमी को कराती है। ललातिका वह आलिंगन है जब युगल की आंख से आंख मुंह से

सह वक्ष से वक्ष, घात प्रतिघात आधान प्रत्याधान पल-पल म करत रहत हैं। ये चुम्बन और आलिंगन ही नारी और पुरुष के समभाव म आने की, उसम पहुँचने की प्रेरक परिस्थितियाँ व स्थितियाँ हैं जिनके बिना समाग सुखकर व सफल नहीं हो सकता।'

'और ये बन्ध ?"

मालूम होता है आपने मर बहुत-कुछ साहित्य का अवलोकन कर लिया है।'

इसी स तो पूछना हूँ।"

अजय बाबू ! व ध और आसन एक-सी समाग स्थिति के दो नाम हैं। नारी और पुरुष की स्थूलता और लघुता उनके अगों के आकार प्रकार पर इनकी रचना शास्त्रकारों न की है। युगल प्रणयिया के बीच कोइ निषेध निरोध अवरोधन नहीं रहना चाहिए। उनके बीच किसी प्रकार की अन्तर्बाधा समागम के समय किसी के लिए रुचिकर, हितकर, सुखकर नहीं हो सकती। परस्पर म सम्पूर्ण समजन, समायोजन ही उपादेय हैं। बन्ध अथवा आसन युगल के लिए विशिष्ट काम क लिए समायोग्य योजना है। यह व्यक्ति व्यक्ति पर निर्भर है कि वह किस प्रकार अपनी संतुष्टि चाहता है करता है। परन्तु प्रत्यक प्रेमी अथवा प्रेमिका के लिए आवश्यक है कि वह अपन शय्या साथी का प्रेरक व सहायक हो। किसी युगल के लिए किसी प्रकार का अवरोधन अथवा अन्तर्बाधा क्रीडास्थली पर क्रीडा के समय सुफलदायक नहीं हो सकती।'

'क्या यह सब शिक्षा इसी तरह तुम अपनी शिष्याओं को देती हो ?"

'निश्चय ही। दी है और देती हूँ।'

'और वे सुनती हैं ?'

बड़ी दिलचस्पी से।'

अजय चुप हो गया।

उसने सुना—'अब चलें। अपनी बातो का अन्त नहीं है। शेष घर पर करेंगे। माँ प्रतीक्षा करती होगी।

'जैसी इच्छा।'

'और ठहरना चाहते हैं ?"

"नही तो ! एक बात पूछू ? '

'अवश्य ।"

कुछ विरमकर अजय ने पूछा— आज शयन कहाँ होगा ?

अतिथि के मन्दिर मे । —अन्य न पुन उस पकड कर चुम्बनो की बौछार कर दी । उसन सुना—

"अश दकर सब प्राप्त नही किया जा सकता अजय बाबू ! सब समपण करके ही सवस्व प्राप्ति की आशा की जा सकती है । हृदय के अपण म नारी व्यापार नही करती । व्यापार को समझन म भी उस देरी नही लगती ।"

कुछ ही समय म अपन साथ का सामान बटोर कर वे तांगे पर आ गय । पचमी का चान्द शन शन अपन अस्ताचल की आर प्रयाण कर गया था । मन्दतर होती हुई चन्द्रिका म अब दूर की चीजें स्पष्ट दिखाई नही दे रही थी । नगर की रोशनी की जगमगाहट ज्याही वे कुछ ऊची जमीन पर आए उन्हें दिखाई देने लगी । शीघ्र ही वे अपन घर आ गये ।

रात्रि अपने मध्य मे पहुँच गई थी । मोहन और उसकी माँ उनकी प्रतीक्षा म अभी जाग रहे थ । उनके पहुचत ही उ हान तांगे का सामान घर म रखा । अजय न यथा माँग तांगवाले को चुकता कर दिया । रतिप्रिया पहुचते ही प्रसाद बाटने लगी । उसन माँ से कहा कि उसन अजय बाबू से आज विवाह कर लिया है । मोहन और उसकी मा दोनो प्रसन्न व प्रहसित हो उठे । माँ बोली—

"आज मेरी साध पूरी हुई । अजय बाबू ! रतिप्रिया जसा नारी रत्न लाख ढूढन पर भी नही मिलता । बधाई तो लाख लाख आपको देती हूँ । साथ ही ईश्वर से कामना करती हूँ कि आपकी जोडी सदा बनी रह । आप मरी बिटिया के हृदय को कभी न दुखाना । बस, यही माँग मैं आपसे आज करती हूँ । इसके बाद दोनो माँ बेटे घर के काम मे व्यस्त हो गए । मा ने दोनो के सोने का कमरा ठीक कर दिया । उसने घर मे रखी देवी-देवताओ की मूर्तिया पर फूल चढाए । धूप दीप किए । प्राथना की ।

रतिप्रिया ने अपने कमरे में आकर देवी सरस्वती की पूजा की। फूल, कुंकुम, धूप दीप अर्पण किया। प्रसाद चढ़ाया। फिर उसने एक शीशे के समीप बैठकर अपना शृंगार किया वस्त्र परिवर्तित किये, सज्जा क्रम को सुरभित किया। एक कटोरी में रोली लेकर वह अजय के पास गई। देवी समक्ष उसने उसकी मांग भर दी। रतिप्रिया ने तिलक कर दिया। फिर झुक कर उसने अजय के पांवों को पकड़ लिया। अजय ने उसे उठाया। देखा तो रतिप्रिया की आंखों में आंसू छलक रहे थे। अपने हाथों से उसने उन्हें पोंछा। फिर बांहों में पकड़ कर वह उसे चूमने लगा। एक विचित्र हलचल दोनों में व्याप्त थी। उद्वेगों की उन हरकतों का आवेश की उन प्रतिक्रियाओं को केवल भोगा ही जा सकता है कहा नहीं जा सकता। न लिखा ही जा सकता है। प्रकृति की, सृष्टि की मांग जो पूरी होने जा रही थी।